4, III

श्रीः

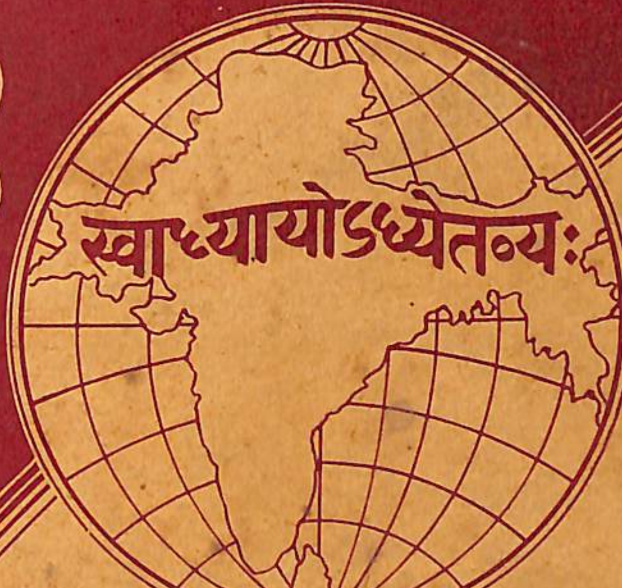
त्रैमासिक

श्रीस्वाध्याय

[वसन्ताङ्क]

वर्ष
४
सं० २००२

संख्या
३
द्वि० चैत्र



वार्षिक
मूल्य
३।-)

इस अङ्क
का मूल्य
।।।=)

संस्थापक—
श्रीमान् अमृतवाग्भव आचार्य

सम्पादक—
श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी

विषय-सूची

आगामी वर्षकी विशेषताएँ

आगामी पांचवें वर्षके आरम्भसे ही हम 'श्रीस्वाध्याय' में कई नवीन मौलिक परिवर्द्धन करने जा रहे हैं। भारतके चुने हुए धुरन्धर विशेषज्ञ विद्वानोंके मौलिक अन्वेषणात्मक वैज्ञानिक धारावाही लेख, व्यापारियोंको सत्परामर्श, अनुभूत चांस और मासिक साप्ताहिक दैनिक तेजीमन्दीका विस्तृत विवेचन, ज्योतिर्विज्ञानकी अद्भुत बातें, राशिफल, मौलिक शिक्षाप्रद कहानी, नाटक आदि आदि अनेक महत्त्वपूर्ण विषय प्रत्येक अङ्कमें दिये जावेंगे। विशेषाङ्क तो पिछले सब अङ्कोंसे बढ़ाचढ़ा हुआ होगा ही। कागज बहुत थोड़ा मिलनेसे विशेषाङ्क सीमित संख्यामें ही छपेगा, अतः जिन ग्राहकोंका ५वें वर्षका मूल्य ३।-) पहले मनीआर्डर द्वारा आजायेगा अथवा जो सज्जन एक कार्ड द्वारा स्थायी ग्राहक रहनेकी सूचना दे देंगे उन्हींको विशेषाङ्क मिल सकेगा। अन्यथा विलम्ब करने वालोंको गत वर्षोंकी भांति विशेषाङ्कसे वञ्चित रहना पड़ेगा। नवीन विशेषताओंका पूरा वर्णन और 'नववर्षाङ्क' की विषयसूची आगामी 'ग्रीष्माङ्क' में दी जावेगी।

व्यवस्थापक—'श्रीस्वाध्याय' सोलन (शिमला)

॥ श्रीः ॥

श्रीस्वाध्याय

[त्रैमासिक-पत्र]

संस्थापक तथा प्रधानाध्यक्ष—

सर्वतन्त्रस्वतन्त्र महामहिम आचार्य

श्री १०८ मान् अमृतवाग्भवजी महाराज

संरक्षक—

बघाटमहीमहेन्द्र धर्ममार्तण्ड

राजा साहब श्री १०५ मान् दुर्गासिंह जी बहादुर C. I. E. सोलन।

रावराजा कैप्टेन श्री १०५ मान् गिरिधारीशरणसिंह जी भरतपुर।

सहायक—

श्री १०५ मती माँजी महाराणी साहिबा (सिरमौरीजी) बघाटराज्य।

श्री १०५ मती सौं० राणी साहिबा वृन्दावनवाली जी (भरतपुर)।

रावबहादुर धर्मालङ्कार श्री १०५ मान् महाराज प्रभुनाथसिंहजी नरसिंहगढ़।

श्री १०५ मान् राजकुमार मानसिंहजी बार.एट-लॉ. जज हाईकोर्ट उदयपुर।

श्रीमान् सरदार कुँवर रणदीपसिंह जी नाहन (सिरमौर)।

श्रीमान् कुँवर शिवसिंह जी B. A., L-L. B. सेशनजज सोलन।

श्रीमान् कुँवर ईश्वरीसिंह जी अध्यक्ष धर्मसभा उदयपुर (मेवाड़)।

श्रीमान् सरदार जगजीतसिंह जी ढिल्लों B. A., L-L. B. नाभा।

सम्पादक और व्यवस्थापक—

ज्यो० मा० ज्यो० र० श्री पं० हरदेव शर्मा त्रिवेदी ज्योतिश्शास्त्री

उपसम्पादक—

श्री पं० बलजिन्नाथ शास्त्री B. A.

प्रकाशक—

श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (पंजाब)

श्रीस्वाध्यायके नियम तथा उद्देश्य

उद्देश्य—

समस्त संसारको हितकी ओर ले जाना तथा ऐहलौकिक और पारलौकिक मोक्ष (स्वातन्त्र्य) प्राप्त कराना "श्रीस्वाध्याय" का मुख्य उद्देश्य है।

सञ्चालक गणोंके नियम—

संरक्षक—

(१) जो महानुभाव ३००) तीन सौ रुपयेसे अधिक प्रतिवर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के संरक्षक माने जायेंगे।

सहायक—

(२) जो सज्जन ५०) से ३००) रु० तक प्रतिवर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के सहायक माने जायेंगे।

सम्मान्य ग्राहक—

(३) जो सज्जन ५) से अधिक ५०) रु० तक प्रतिवर्ष सहायता देंगे वे 'श्रीस्वाध्याय' के सम्मान्य ग्राहक माने जायेंगे।

'श्रीस्वाध्याय' के नियम—

(१) 'श्रीस्वाध्याय' (जब तक त्रैमासिक रहेगा तब तक) आश्विन शुक्ल १०, पौष शुक्ल १०, चैत्र शुक्ल १० और आषाढ़ शुक्ल १० को प्रकाशित हुआ करेगा। इस त्रैमासिक संस्करणका वार्षिक मूल्य ३।=) और एक प्रतिका १) है। स्थायी ग्राहक आश्विन से ही बनाये जाते हैं। 'श्रीस्वाध्याय' के स्थायी ग्राहकों को हमारी "श्रीग्रन्थमाला" की सभी अद्भुत अमूल्य पुस्तकें बिना मूल्य (मुफ्त) दी जावेंगी। ऐसी सर्वोपयोगी अमूल्य पुस्तकें कोई भी मासिक-पत्र प्रतिवर्ष अपने ग्राहकोंको बिना मूल्य नहीं देता। यह 'श्रीस्वाध्याय' के ग्राहकों को विशेष लाभ है। पर्याप्त संरक्षक सहायक और ग्राहक होने पर बहुत शीघ्र ही 'श्रीस्वाध्याय' मासिक कर दिया जायगा।

(२) जिन सज्जनोंके लेख श्रीस्वाध्याय-सदनकी ओरसे प्रार्थना-पूर्वक मंगवाये जायेंगे वे अवश्य प्रकाशित होंगे। अन्य लेख यदि गवेषणापूर्ण मौलिक और उपयोगी समझे जायेंगे तो यथा समय प्रकाशित हो जावेंगे, अन्यथा नहीं।

(३) लेख, कविता, चित्र, समालोचनार्थ पुस्तकों की दो-दो प्रतियाँ और विनिमय (परिवर्तन) के पत्र पत्रिकायें सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय' सोलन (पंजाब) के पते से भेजने चाहियें।

(४) लेख, कविता आदि प्रकाशनार्थ सामग्री स्पष्ट अक्षरोंमें कागजके एक ओर ही लिखी होनी चाहिए।

(५) किसी लेखके प्रकाशित करने या न करने, उसे घटाने बढ़ाने तथा उसे लौटाने न लौटानेका सम्पूर्ण अधिकार सम्पादकको है। जिस अस्वीकृत लेखको सम्पादक लौटाना स्वीकार करें, उसका डाक और रजिस्ट्रीका व्यय लेखकको भेजना होगा। अधूरे लेख नहीं लिये जाते।

विज्ञापन छपवाईके नियम—

१ पृष्ठ या दो कालम की छपाई	२०) प्रति अङ्क
आधा पृष्ठ या एक कालम की छपाई	१२) ,,
चौथाई पृष्ठ या आधा ,,	६।।) ,,

पूरे वर्ष या चार अंकोंमें एक पृष्ठकी छपाई ६५) रु० होगी।

टाइटलके चौथे पृष्ठकी छपाई ६५) प्रति अङ्क
वर्ष भर तक टाइटल चौथे पृष्ठ की छपाई २००)रु०
टाइटलके दूसरे तीसरे पृष्ठ की ,, ५०) प्रति अङ्क
वर्षभर तक टाइटलके दूसरे तीसरे पृष्ठ की छपाई १६०) रु०

त्रैमासिक 'श्रीस्वाध्याय' के पृष्ठका आकार २०×३० अठपेजी। कालम स्थान ८×३ इञ्च है।

आधे पृष्ठसे अधिक विज्ञापन देने वालोंको 'श्रीस्वाध्याय' बिना मूल्य भेजा जावेगा। छपाईकी रकम पेशगी प्राप्त होने पर ही विज्ञापन पत्रमें छापा जावेगा।

इस विज्ञापन शुल्कमें किसी प्रकारकी रियायत वा न्यूनताके लिए लिखना व्यर्थ है।

पता—व्यवस्थापक, श्रीस्वाध्यायसदन, सोलन, (शिमला)

ग्राहकोंको आवश्यक सूचना

चतुर्थवर्षके 'नववर्षाङ्क' की सब प्रतियाँ समाप्त हैं, अतः अब कोई ग्राहक गत विशेषाङ्क (नववर्षाङ्क) के लिए आर्डर न भेजें। आशासे अधिक माँग आनेके कारण 'नववर्षाङ्क' शीघ्र ही समाप्त हो गया और कुछ हमारे पुराने ग्राहकोंको भी (जिन्होंने बहुत विलम्बसे मूल्य भेजा) वह अंक नहीं मिल सका। एतदर्थ गत 'हेमन्ताङ्क' से प्रतियाँ कुछ अधिक छपवाई जा रही हैं। जो सज्जन अब ग्राहक होना चाहें वे पूरा वार्षिक मूल्य ३।-) न भेज कर गत पौषके 'हेमन्ताङ्क' से वर्ष समाप्तिके — आषाढ़ — 'ग्रीष्माङ्क' तक तीन अंकोंका मूल्य २।) भेज दें; अथवा २॥) की वी. पी. पी. मंगवा लेवें। किसी सज्जनको चतुर्थवर्षके 'नववर्षाङ्क' की अत्यधिक आवश्यकता हो तो कार्यालयकी फाइलकी प्रतियोंमेंसे ५) में भेजा जा सकेगा।

जो नये ग्राहक गत हेमान्ताङ्कसे तीन अंकोंके मूल्यके साथ डाक रजिस्ट्री खर्चके ।=) अधिक मिला कर कुल २॥=) मनीआर्डर द्वारा भेज देंगे, उन्हें तोनों उपहार पुस्तकें और १।) मूल्यका प्रथमवर्षका प्रथमाङ्क बिना मूल्य साथ ही रजिस्ट्रीसे भेजा जावेगा। यह नये ग्राहकोंके लिए विशेष लाभप्रद सुविधा की गई है।

बहुतसे ग्राहक वार्षिक मूल्य भेजते समय मनीआर्डरके कूपन पर अपना नाम पता और ग्राहकसंख्या नहीं लिखते और कई उर्दू में अस्पष्ट अक्षरोंमें लिखते हैं, इससे हमें बड़ी कठिनाई होती और अंक भेजनेमें भी विलम्ब हो जाता है। अतः पुराने ग्राहकोंको अपनी ग्राहक संख्या (जो 'श्रीस्वाध्याय' के रैपर — पतेके कागज—पर लिखी रहती है) और नये ग्राहकोंको अपना पूरा पता कूपन पर स्पष्ट अक्षरोंमें लिखना चाहिये।

संस्थाकी ओरसे जो पुस्तकें प्रकाशित हैं या होती हैं — वे ग्राहकोंको एक ही बार भेजी जाती हैं। प्रतिवर्ष वे ही पुस्तकें दुबारा भेजनेका नियम नहीं है। कागजकी भीषणतम महर्घता और दुष्प्राप्यताके कारण तृतीय वर्षमें संस्थाकी ओरसे कोई पुस्तक प्रकाशित नहीं हो सकी।

'श्रीस्वाध्याय' का नमूना बिना मूल्य किसीको भी नहीं भेजा जाता है। अतः कोई सज्जन नमूनेके लिए वाध्य न करें। यदि एक प्रति (नमूनार्थ) मंगवानी हो तो उसके लिए १) भेजना आवश्यक है। जिन सज्जनोंके जवाबीपत्र या उत्तरके लिए टिकिट आवेंगे उन्हींको संस्थाकी ओरसे उत्तर दिया जायगा। 'श्रीस्वाध्याय' का प्रत्येक अंक प्रकाशित होनेकी तिथि (शुक्ला दशमी) को प्रत्येक ग्राहकके नाम बड़ी सावधानीसे भेज दिया जाता है। यदि किसी ग्राहकके पास न पहुँचे तो पहले अपने स्थानीय पोस्ट आफिस (डाकघर) में पूछताछ करके पोस्टमास्टरके उत्तरके साथ १५ दिनके अन्दर हमें सूचना देनी चाहिये।

अर्धवार्षिक (छःमाही) मूल्य १॥=)

जो सज्जन इस 'वसन्ताङ्क' से केवल ६ मास (दो अंकों) के लिए ही ग्राहक होना चाहें, वे एक रुपया चवदह आने मनीआर्डर से भेज दें। छःमाही ग्राहकोंका नाम स्थायी रजिस्टरमें नहीं लिखा जाता, अतः उनको विशेष लाभ इसीमें है कि इस अंकसे दो अंकोंका छःमाही मूल्य १॥=) और आगामी पाँचवें वर्षका पूरा मूल्य ३।-) मिला कर कुल ५≡) मनीआर्डर द्वारा भेज दें, ताकि डेढवर्षके लिए उनका नाम स्थायी ग्राहकोंमें लिख लिया जावेगा और १।) मूल्यका प्रथमांक तथा उपहार पुस्तकें भी उन्हें बिना मूल्य मिल सकेंगी।

पत्रव्यवहारका पता—व्यवस्थापक, श्रीस्वाध्यायसदन सोलन (शिमला)

श्रीस्वाध्याय—

भारतीय विद्वानोंकी दृष्टिमें

लब्धप्रतिष्ठ कवि तथा सुविख्यात समालोचक 'भारत' 'कमला' और 'वीणा' के यशस्वी सम्पादक श्री पं० शान्तिप्रियजी द्विवेदी लिखते हैं—

"श्रीस्वाध्यायका 'नववर्षाङ्क' देख कर तन-मन-नयन तृप्त हो गये। ज्ञानका सञ्चय करनेवाले जिज्ञासुओं-के लिए इसमें बहुतसे उपयोगी लेख हैं, अपने नामके अनुरूप ही यह पत्र पाठकोंको स्वाध्यायकी पूर्ण सामग्री देता है। हिन्दी प्रान्तसे दूर आपने यह जो सांस्कृतिक अनुष्ठान प्रारम्भ किया है, इसके संरक्षणके लिए संरक्षकगण बधाईके पात्र हैं; तथा आप और आपका यह सुसम्पादित-पत्र धन्यवाद और स्वागत पानेका अधिकारी है।"

❀ ❀ ❀ ❀

संस्कृतरत्नाकरके यशस्वी सम्पादक, गाथासप्तशती, साहित्य-वैभव, जयपुर-वैभव आदि अनेकों ग्रन्थोंके ख्यातनामा निर्माता, जयपुरराजकीय-विद्यालयोंके निरीक्षक, संस्कृतसाहित्यके सुविख्यात कवि और समालोचक साहित्याचार्य भट्ट श्री पं० मथुरानाथ जी शास्त्री लिखते हैं—

"श्रीस्वाध्यायको मैंने बड़े अवधानसे पढ़ा है। यह अपने ढङ्गका एक ही पत्र है। आर्यशास्त्रोंके वे प्राचीन उपदेश और रहस्य जिनके कारण आज भी भारतका मस्तक उन्नत है, धीरे-धीरे लोगोंसे अपरिचित होते जा रहे हैं। उन पर प्रकाश डालने वाला हिन्दीमें न स्थायी साहित्य है और न मासिक आदि पत्र ही उनकी चर्चा उठाते हैं। हर्षकी बात है कि "श्रीस्वाध्याय" समय-समय पर उनकी याद दिलाता रहता है। व्रत उत्सव आदिके कर्तव्य और उनका रहस्य आवश्यक अवसर पर इसमें प्रकाशित होते रहते हैं। सबसे अधिक ज्योतिषका विषय है। जिस पर अब भी बहुत लोगोंकी दृढ़ आस्था है। इसकी भविष्यवाणी लोग बड़े उत्साह और आश्चर्यसे पढ़ते हैं..................पूज्यपाद श्री अमृतवाग्भवाचार्यजी-की रचना बड़ी सामयिक और रोचक इसमें निकलती है। आचार्यजी महाराजकी केवल कविता ही मर्म-स्पर्शिनी नहीं, आपकी लोकचरित्राभिज्ञता भी अद्‌भुत है। 'स्वाध्याय' के सम्पादकका विषय-संकलन बड़ा मार्मिक और उपयोगी है। यथार्थनामा 'स्वाध्याय' का मैं हृदयसे अभिनन्दन करता हूँ।"

❀ ❀ ❀ ❀

संस्कृत-हिन्दी-अंग्रेजी साहित्यके सुप्रसिद्ध मर्मज्ञ विद्वान्, हरिद्वार—ऋषिकुल—महाविद्यालयके प्रिन्सिपल व्याकरणाचार्य श्री पं० मनोहरलाल जी शास्त्री M. A., M. O. L. लिखते हैं—

"श्रीस्वाध्यायमें धार्मिक तथा सामाजिक समस्याओं पर बड़े मर्मस्पर्शी लेख आते हैं। सम्पादक महोदय हिन्दी संस्कृतके अनुभवी विद्वान् और ज्योतिषशास्त्रके विशेषज्ञ हैं। यही कारण है कि भविष्य-सम्बन्धी ज्योतिषविषयक आपके लेख समयकी घटनाओंने सत्य प्रमाणित किये हैं। धार्मिक समाज सर्वसाधारण शिक्षित जनताके तथा विद्वानोंके लिए यह पत्र परमोपयोगी है। हम सब ऐसे पत्रोंको प्रोत्साहन दें, यह हमारा कर्तव्य है।"

स्वाध्यायोऽध्येतव्यः । ❀ श्री ❀ स्वाध्यायान्न प्रमदितव्यम् ।

श्रीस्वाध्याय

[वसन्तांक]

स्वराष्ट्रशिक्षां गृहीयाच्चिकीर्षुः स्वां समुन्नतिम् ।
दूरदृष्टिर्यया भूत्वा न कदाऽपि विषीदति [राष्ट्रालोक]

वर्ष ४ | सोलन, द्वि० चैत्र शु० १० शनिवार सं० २००२ वि० | संख्या ३

तत्तद्राष्ट्रे मानवानां व्यवस्थां शोभासम्पच्छालिनीमार्यरीत्या ।
प्रेम्णा लोके स्थापयँस्तत्त्वदर्शी श्रीस्वाध्यायः कल्पतां विश्वभूत्यै ॥

—अ० वा० आचार्य

॥ श्रीस्वाध्यायः ॥

[कविभूषण श्री पं० उदयभानु जी शर्मा 'हंस']

श्रीशेच्छया विरचितेऽखिल-लोक-मध्ये
स्वातन्त्र्यमाप्तुमतुलं सुजनो यतेत ।
ध्यानेन पद्धतिमिमां लभतां स भद्यो
योऽस्मिन् भवे खलु तृणीकृत जीवनोऽस्ति ॥ १ ॥

नूनं मान्यो लोकमान्यैर्वदान्यैः
सूरिस्तोमैः सुस्तवैः स्तूयमानः ।
स्वीयेदेशे देशसन्देशदोऽयं
'श्रीस्वाध्यायः' सेवितव्योऽस्ति सर्वैः ॥२॥

उन्नति

संसारमें वृक्ष आदि स्थावर भी उन्नतिको चाहते हैं, मनुष्योंके विषयमें फिर कहना ही क्या। वस्तुतः परमेश्वर हीके स्वरूप स्थावर जंगम आदि सभी हैं। परमेश्वर स्वभाव से ही पूर्णतया उन्नत है। परन्तु अपनी ही माया-शक्ति द्वारा अपने पूर्ण उन्नत स्वरूपको स्वयमेव परमेश्वरने छिपा कर रखा है। इसी कारण इस मायामय-स्वरूपमें प्रत्येक जीव रूपी परमेश्वर अपने आपको अपूर्ण और अवनत समझता हुआ उन्नतिके लिए प्रयत्न करता रहता है। कोई थोड़ी तो कोई अधिक उन्नतिको प्राप्त करता ही रहता है। यह उन्नतिकी इच्छा समस्त सांसारिक व्यवहारोंका मूलकरण है। इस समय जो इतने भयङ्कर युद्ध हो रहे हैं इनका भी कारण उन्नतिकी अभिलाषा ही है। आदि कालसे लेकर यह इच्छा मनुष्यको उन्नतिकी ओर लेती गई है। कभी—कभी अज्ञानके कारण उन्नतिको चाहने वाली मनुष्य जाति अवनतिकी ओर भी गई है। इस वर्तमान वैज्ञानिकयुगके आरम्भमें मनुष्योंकी आशा यह थी कि यूरोप देशमें प्रकट हुआ भौतिक विज्ञान मनुष्योंको क्रमशः परम-उन्नति तक ले जाएगा। परन्तु इस समय जो कुछ दीख रहा है उससे यही सिद्ध होता है कि मनुष्यता उन्नति की अपेक्षा अवनतिके समुद्रमें डूबी जा रही है। दया, प्रेम, सौहार्द, सहानुभूति, उदारता आदि गुणोंसे प्रायः सभी सभ्य कहलाने वाली मनुष्य जातियां हाथ धो बैठी हैं। मनुष्य पशुओंसे भी अधिक घृणित प्रवृत्तियोंके शिकार बन गए हैं, एक दूसरेको खा जाने पर उतारू हो गए हैं। **"पीत्वा मोहमयीं प्रमादमदिरामुन्मत्तभूतं जगत्"** यह महाकविकी उक्ति शत-प्रतिशत पूरी हो रही है। हमारे भारतवर्षने भी मनुष्यताकी उन्नतिके लिए बड़े बड़े प्रयत्न किए। साधारण जीवके लिए भारतवर्षने बुद्धकी पदवी तक पहुँचानेके मार्ग प्रकट किए। जीवको परमेश्वर तक बन जानेकी प्रक्रियाएं जनताके सामने स्पष्ट शब्दोंमें रख दीं। परन्तु इतने बड़े बड़े उन्नतिके साधनोंके होते हुए भी परिणाम जो हुआ सो आज कल प्रकट ही है। सैकड़ों वर्षोंसे भारतवर्ष पर विदेशियोंका शासन है। सहस्रों भारतीय भूखों मर रहे हैं। पहननेको वस्त्र नहीं, रोगियोंको औषध नहीं, मलेरियाका कोई प्रतीकार नहीं। पारतन्त्र्यके कारण सुखके साधन भी दुःख ही दे रहे हैं। इस समय भारतीयोंको अपने विचार तक प्रकट करनेका अधिकार नहीं, दुःखीको जी खोल कर रोनेका अधिकार नहीं। लाखों वर्षोंके प्रयत्नोंका हमें अन्तमें यह फल मिला कि अनन्त शक्तिसे परिपूर्ण भारतवर्ष अल्प-शक्ति वाले शत्रुओंका सामना न कर सका। थोड़ेसे समयमें पश्चिमसे पूर्व तक और उत्तरसे दक्षिण तक मुसलमानोंका अधिकार जम गया। सारांश यह कि आज तक मनुष्यताने उन्नतिके लिये जहां कहीं जो कोई भी प्रयत्न किए उनमेंसे कोई भी प्रयत्न पूर्ण रीतिसे सफल नहीं हुआ। इसका क्या कारण है? कारण केवल एक हो सकता है कि मनुष्यता अच्छी प्रकारसे उन्नतिके मर्मको नहीं समझी और उन्नतिके लिए जिस मार्ग पर यह प्रयत्न करती गई वह सच्चा मार्ग नहीं था। इस लेखमें हम उन्नति और उसकी प्राप्तिके मार्ग पर ही थोड़ा सा विचार करेंगे।

उन्नति तीन प्रकारकी होती है। शारीरिक, मानसिक और आध्यात्मिक। सामाजिक, आर्थिक, व्यावहारिक आदि प्रकार इन्हीं तीन प्रकारोंमें आ जाते हैं। शारीरिक उन्नतिमें धन, धान्य, शरीर, बल, स्वास्थ्य, आयु, शक्ति, जन-संख्या आदिकी उन्नति सभी गिनी जाती है। क्योंकि इन सभीका सम्बन्ध व्यक्ति अथवा जातिके शरीर हीके साथ है। राजनीतिक, विज्ञान, कलाऽकौशल, साहित्य आदिकी उन्नति मानसिक कोटिमें गिनी जाती है। क्योंकि इन सभी क्षेत्रोंमें मनन शक्तिका ही प्राधान्य है। चरित्र, धर्म, दर्शन शास्त्र, योग, उपासना, आदिकी उन्नति वस्तुतः आध्यात्मिक उन्नति ही है। ये उन्नतिके मुख्य तीन वर्ग भी वस्तुतः एक ही उन्नतिके अङ्ग प्रत्यङ्ग हैं। वह मुख्य उन्नति है आध्यात्मिक उन्नति। परन्तु अङ्गोंकी अवहेलनासे अङ्गीकी स्वयमेव अवहेलना हो जाती है, इस कारण मन और शरीरको जरा प्राधान्य देकर पृथक् गिना जाता है। अतः उन्नतिके ये मुख्य तीन वर्ग सिद्ध होते हैं। ये तीनों वर्ग परस्पर आश्रित हैं। यदि इनमेंसे एक बिगड़ जाए तो शेष दो भी बिगड़ जाते हैं। अतः उन्नतिके इच्छुकको इन तीनोंके विषयमें सावधान रहना चाहिए। यह बात तो

अनुभव सिद्ध है कि जब मनुष्यका शरीर अस्वस्थ और निर्बल हों तो उसका मन भी अस्वस्थ हो जाता है। कामना क्रोध, ईर्ष्या, चिड़चिड़ापन आदि मानसिक रोग तो बीमार को स्वभावसिद्ध होते हैं। इसी प्रकारसे जिस व्यक्तिका मन स्वस्थ न हो, जिसे चिन्ता हो, जो उदास हो, जिसके मनमें ईर्ष्या, द्वेष, क्रोध आदि अधिक मात्रामें हों उसका शरीर भी शीघ्र हीं निर्बल और क्षीण हो जाता है। शरीर और मन दोनों स्वस्थ हों तो तब मनुष्य आत्माकी उन्नतिके लिए योग आदिके अभ्यास द्वारा प्रयत्न कर सकता है। आधि, अथवा व्याधिसे ग्रस्त जीव कभी आध्यात्मिक उन्नति नहीं कर सकता। इसी प्रकारसे जो व्यक्ति आध्यात्मिक विषयोंमें सर्वथा पतित हो उसका मन भी पतित ही होता है। मनके पतित होने से वह ऐसे काम करता है जिनसे उसके शरीरका भी ह्रास हो जाता है, इस कारण उन्नतिके इच्छुकको एक साथ ही शरीर, मन और आत्माकी उन्नतिके लिए प्रयत्न करना चाहिए; तब कहीं वह सफल होगा। इन तीनमेंसे भी सबसे पहला स्थान है आत्माका, दूसरा स्थान है मनका और तीसरा स्थान है शरीर का। उन्नतिको एक रथ समझिए। शरीर, मन और आत्माको इसके तीन घोड़े समझिए। ये तीनों घोड़े जितने तेज चालके और जितने स्वस्थ और बलशाली हों उतना उन्नतिका रथ शीघ्रतासे ऊपर-ऊपर चढ़ता जायगा। इन तीन घोड़ोंमेंसे सबसे पहला है आत्मा, इस कारण वही सबसे बलवान् होना चाहिए, क्योंकि उन्नतिके रथका भार उसी पर अधिक है, उसीने अधिक जोर लगाकर इसे खींचना है। उससे दूसरी श्रेणीका बल दूसरे घोड़े अर्थात् मनमें होना चाहिए। यदि मन आत्मासे अधिक बलशाली हो तो उससे भी आगे निकलनेका प्रयत्न करेगा। इससे रथको टूटनेका भय होगा। अब यदि वह आत्मासे अधिक बलवान् न हो परन्तु अत्यन्त निर्बल हो तो भी रथका चलना सम्भव नहीं। क्योंकि इस प्रकारसे सारा भार आत्मा पर ही रहेगा और वह थोड़ी दूर बल लगाकर चलेगा भी तो अवश्य थककर गिर जायगा और रथको भी साथ गिरा देगा। इसी प्रकारसे मन और शरीरके बलका परस्पर तारतम्य समझना चाहिए। सारांश यह कि यदि शरीरमें १० मील प्रतिघण्टा चलनेकी शक्ति हो तो मनमें १५मील तथा आत्मामें बीस मील चलनेका सामर्थ्य होना चाहिए। तब कहीं उन्नतिका रथ पर्वतके शिखर तक पहुँच सकेगा। राजपुत्रकालमें हमारे समाजके रथका दूसरा घोड़ा बिलकुल सो गया था। हमारी जातिमें आध्यात्मिक गुरु अवश्य थे, हमारे सैनिक भी बड़े शूरवीर थे, परन्तु समाजकी मानसिक अवनतिके कारण ईर्ष्या, द्वेष आदि रोग हमारे मनको निर्बल कर चुके थे; नीति तो नाम मात्र भी हमारे पास अवशिष्ट नहीं रही थी, अतः हम एक सामान्यसे शत्रुका सामना न कर सके। हमारे गोपालके सामने जब एक असुर गोरूपमें आया था तो उन्होंने झट बिना किसी शङ्काके उसे मार डाला था; परन्तु हम मानसिक दुर्बलताके कारण भगवान् बालगोपालके इस चरित्रसे कोई उपदेश न ले सके और ज्यों ही हमारे सामने शत्रुओंने गोसेना खड़ी कर दी तो हमने शस्त्र छोड़ दिए। भगवान्ने महाभारतके युद्धमें निःशस्त्र करणको आततायी समझ कर अर्जुन द्वारा मरवा दिया, परन्तु हमारे वीर पृथ्वीराजने बन्दी किए हुए शत्रुको क्षमा करके छोड़ दिया। इस प्रकारके नीतिदोष आदि मानसिक दुर्बलताओंका दुष्परिणाम हम अभी तक भोग रहे हैं। यदि हममें मानसिक दुर्बलता उस समय न होती, यदि आध्यात्मिक क्षेत्रकी भांति ही मानसक्षेत्र में भी हम अग्रसर होते तो आज भारत क्या समस्त संसार की दशा कुछ और ही होती।

यूरोपने इससे विपरीत प्रकारका प्रयत्न किया। भौतिक विज्ञानकी उन्नति द्वारा उनके उन्नति रथका दूसरा घोड़ा तो सहस्रों मील प्रतिघण्टा चलनेका प्रयत्न करने लगा, शारीरिक घोड़ा भी कहीं चालीस पचास मीलके लगभग चलने का साहस कर बैठा, परन्तु पहला और प्रधान घोड़ा सर्वथा सो ही गया। पहले-पहले थोड़ा-थोड़ा चलता भी था परन्तु दूसरे घोड़ेकी अतितीव्र गति देखकर बहुत डरने लगा और आंखें बन्द करके सो गया। मध्यम घोड़ा इस समय इतना वेग दिखा रहा है कि रथ कभी पूर्व तो कभी पश्चिमकी ओर गिर रहा है। यह सब कुछ सभी लोग इस समय देख रहे हैं। इसी कारण यूरोपकी उन्नतिका दुष्परिणाम कहीं हमारे से भी बढ़ चढ़कर हो रहा है।

इन बातोंका विचार करके उन्नतिके इच्छुकों और परोपकारी महात्माओंको ऐसा प्रयत्न करना चाहिए कि जिससे मनुष्य जातिके शरीर, मन और आत्मा तीनों साथ साथ उन्नति करते जाएं। उन्नतिकी इस अलौकिक (आध्यात्मिक) और लौकिक (मानसिक और शारीरिक) आकृति को ही समझकर उपनिषदने उपदेश किया हैः—

अन्धं तमः प्रविशन्ति ये अविद्यामुपासते।
ततो भूय इव ते तमो य उ विद्यायां रताः॥
विद्यां चाविद्यां च यस्तद्वेदोभयं सह।
अविद्यया मृत्युं तीर्त्वा विद्ययाऽमृतमश्नुते॥

नैर्मल्य

[ले०— श्री पं० बलजिन्नाथ शास्त्री बी० ए०]

निर्मलताको नैर्मल्य कहते हैं। जब तक मलका व्याख्यान न किया जाए तब तक नैर्मल्यका व्याख्यान नहीं किया जा सकता। क्योंकि मलका अभाव ही नैर्मल्य होता है। उपनिषद् कहते हैं "सर्वं खल्विदं ब्रह्म" अर्थात् सब कुछ परब्रह्म ही है। परब्रह्म तो स्वभावतः ही निर्मल है। उसमें तो मलका लेश भी नहीं। यदि उसमें थोड़ा भी मल होता तो उसे हम कभी ब्रह्म नहीं मानते। वेदोंमें भी उसको निरञ्जन अर्थात् निर्मल कहा गया है। अतः वह सर्वथा और सर्वदा निर्मल ही है। उसके निर्मल होनेके कारण सब कुछ निर्मल ही है। मल तो कहीं है ही नहीं। क्योंकि सबकुछ वही है। फिर भला मल किसको कहें। सांसारिक दृष्टिसे देखा जाए तो सब कुछ मल ही मल प्रतीत होता है। इच्छा, कर्म, पाप, पुण्य, शरीर, इन्द्रिय, अविद्या, अस्मिता, राग, द्वेष, अभिनिवेश, काम, क्रोध, लोभ, मोह और मद आदि मलके बड़े बड़े केन्द्र हमारे अपने पास ही तो विद्यमान हैं। यदि ये भी ब्रह्म ही हैं तो भला ये मलस्वरूप क्यों हैं? यदि निर्मल परब्रह्मसे व्यतिरिक्त हैं तो परब्रह्म परब्रह्म नहीं रह सकते। क्योंकि बृहत् अर्थात् बड़ेको ब्रह्म कहते हैं। "ब्रह्म परिवृढं भवति" ऐसा निर्वचन तो निरुक्तकारने भी ब्रह्म शब्दका किया है। यह तो हुआ ब्रह्म। परब्रह्म तो फिर बृहत् से भी बृहत्तम होना चाहिये। अब यदि मलको उससे व्यतिरिक्त मान लिया जाए, तब तो उसमें व्यापकता नहीं रहती। व्यापकताके अभावके कारण उसमें ब्रह्मत्व नहीं रहता। अब यदि इस मलको मिथ्या मान लिया जाए और यह कहा जाए कि मायाके कारण स्वप्नमें देखे हुए पदार्थकी भांति मिथ्या मल ही हमें केवल प्रतीत हो रहा हैं। इसकी वास्तविक सत्ता कोई भी नहीं। तब यह प्रश्न उठता है कि यह माया निर्मल ब्रह्म ही है कि उससे व्यतिरिक्त। यदि ब्रह्म ही है तो निर्मल है। निर्मलसे असत्प्राय मल कैसे प्रतीत हो रहा है? यदि ब्रह्मसे व्यतिरिक्त वस्तु माया है तो फिर वही बृहत्ताका अभाव रूप दोष ब्रह्ममें आएगा। अतः इससे भी काम नहीं चल सकता। अतः इस मलकी उपपत्ति बहुत ही कठिन है। नैर्मल्य और मल दोनोंके रहस्यको वस्तुतः वे ही समझ सकते हैं जिनको यथार्थरूपमें नैर्मल्यका अनुभव प्राप्त हुआ हो। ऐसे महापुरुषोंके उपदेशोंके अनुसार नैर्मल्य और मलका उपपादन हम इस लेख में करेंगे।

परब्रह्म सचमुच बृहत् हैं। सर्वत्र उसकी सत्ता है। सबकुछ उसीके ब्रह्मस्वरूपमें उसीकी इच्छासे प्रकट होता है, पुनः उसीमें लीन होता है। जो कुछ मल हमें माया द्वारा प्रतीत होता है वह सर्वथा मिथ्या नहीं। यदि सर्वथा मिथ्या ही होता तो प्रतीत ही कैसे होता। यह मल भी उसीकी इच्छासे प्रकट हुआ है। वह पूर्ण निर्मल है। पूर्ण होनेके कारण ही वह मल और नैर्मल्य दोनोंकी कल्पना अपनेमें ही करता है। ये दोनों तत्त्व शक्तिरूपमें उसीमें विद्यमान होते हैं। जैसे बिजलीकी तारमें शक्तिरूप में अग्नि विद्यमान होती है। सर्वथा परिपूर्ण होने के कारण वह पूर्ण आनन्दस्वरूप हैं। क्योंकि पूर्णता का ही दूसरा नाम आनन्द है। उसे आनन्दका एक समुद्र सा मानिए। इस अपार आनन्दके समुद्रमें करोड़ों आनन्दकी लहरिकाएं विलसित होती हैं। अथवा अनन्त आनन्द लहरिकाओंमें स्वयं ही वह विलास कर रहा है। उन्हीं लहरियोंमें एक इच्छा नामक लहरी है जो क्रियाका रूप धारण करती हुई आनन्दातिरेकसे ही इस संसाररूप मलकी कल्पना

(शेष पृष्ठ ३७ पर)

वेदस्वरूप-निरूपण

[लेखक—श्री पं० दीनानाथ जी शास्त्री सारस्वत विद्याभूषण विद्यावागीश]

[गताङ्कसे आगे]

स्वा० दयानन्दजीने ऋग्वेदादिभाष्य भूमिकाके ८५ पृष्ठमें 'न चतुष्ट्वमैतिह्यार्थापत्तिसम्भवाभावप्रामाण्यात्' २।२।१ इस न्यायदर्शनके सूत्रको लिख कर वहाँ पर 'न चत्वार्येव प्रमाणानि, किं तर्हि ऐतिह्यमर्थापत्तिः सम्भवोऽभाव इत्येतान्यपि प्रमाणानि' यह वात्स्यायन-भाष्य उद्धृत किया है। उसके बाद 'इति होचुरत्यनिर्दिष्टप्रवक्तृकं प्रवादपारम्पर्यमैतिह्यम्' यह वात्स्यायन-भाष्यस्थ ऐतिह्यका लक्षण लिख कर उसके आगे 'अनेन प्रमाणेनापि इतिहासादिनामभिर्ब्राह्मणान्येव गृह्यन्ते नान्यदिति' यह अपनी संस्कृत लिखी है, जिसका अर्थ यह है कि — 'इस न्यायभाष्यके प्रमाणसे इतिहास आदि नामोंसे ब्राह्मणभागका ही ग्रहण होता है।' यह लेख नितान्त ही कल्पित है। यहाँ पर न्यायभाष्यमें ब्राह्मणभागकी कोई चर्चा ही नहीं, न ही ब्राह्मणभागका इसमें कोई प्रकरण है; तब वहाँ पर 'अस्मिन् प्रमाणे ब्राह्मणमितिहासग्रन्थो मतो न वेदः' (इस प्रमाणमें ब्राह्मणग्रन्थ इतिहास माना गया है वेद नहीं) यह स्वामीजीका लिखना केवल कपोल-कल्पनामात्र है; स्वामीजीके ऐसे उल्लेखमें हमें सचमुच ही खेद तथा आश्चर्य हुआ।

अपनी पुस्तकके ८१ पृष्ठमें स्वामीजीने ब्राह्मणभागके विषयमें यह लिखा है कि—'यथा ब्राह्मणग्रन्थेषु मनुष्याणां नामलेखपूर्वका लौकिका इतिहासाः सन्ति, न चैवं मन्त्रभागे इति' अर्थात्—ब्राह्मणभागमें तो इतिहास हैं, पर मन्त्रभागमें नहीं; इसलिए मंत्रभाग वेद है, ब्राह्मणभाग नहीं। परन्तु यह भी ठीक नहीं। ब्राह्मणभागमें जो इतिहास हैं; वे मन्त्रभाग वर्णित इतिहासके विवरणस्वरूप हैं, स्वतन्त्र नहीं। तब जो उत्तर मन्त्रभागस्थ इतिहासोंका होगा, वही उत्तर ब्राह्मणभागस्थ इतिहासोंका भी हो जायगा। यदि मन्त्रभागस्थ इतिहास अर्थवाद रूप माने जावें, तब ब्राह्मणभागमें भी ऐसे ही मानना चाहिये। यदि मन्त्रभागमें उन्हें भविष्यद्-रूपसे माना जाय; तो ब्राह्मणभागमें भी वैसा ही समझना चाहिये। हमने मन्त्रभागसे बहुतसे इतिहास सङ्कलित किये हैं; उनमें वादियोंके आक्षेपोंका उत्तर भी दिया है। उसका विवरण हमने अपने बनाये पाँच-सहस्र फुलिस्केप पृष्ठों वाले 'श्रीसनातनधर्मा-लोक' ग्रन्थमें किया है; जिसका संस्कृत-संस्करण, खण्ड-खण्ड करके अयोध्याके 'संस्कृत कार्यालय' से शीघ्र ही छपनेवाला है।

आगे चल कर स्वा० दयानन्दजीको "त्र्यायुषं जमदग्नेः, कश्यपस्य त्र्यायुषम् यद् देवेषु त्र्यायुषं तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्" यजुः ३।६२ इस मन्त्रमें स्वयं इतिहासकी शङ्का हुई। परन्तु 'चक्षुर्वै जमदग्निर्ऋषिः' इस शतपथब्राह्मणके प्रमाणसे स्वामीजीने जमदग्निका अर्थ बदल डाला। परन्तु जमदग्निका 'चक्षु' या गौण अर्थ है, क्योंकि वेदमें आध्यात्मिक आधिभौतिक आधिदैविक तीन भाव स्थान-स्थान पर हुआ करते हैं; इसलिए उसका ऋषिविशेष अर्थ भी नहीं हटाया जा सकता; नहीं तो क्या स्वामीजी 'त्रयो वेदा एते एव वागेव ऋग्वेदः, मनोयजुर्वेदः, प्राणः-सामवेदः, १४।४।३।१२ इस शतपथब्राह्मणके अनुसार 'तस्माद् यज्ञात् सर्वहुत ऋचः सामानिजज्ञिरे छन्दाꣳसि जज्ञिरे तस्माद्, यजुस्तस्माद् अजायत' यजुः ३१।७ इस मन्त्रके ऋग्, यजुः, सामका वाणी, मन, प्राण अर्थ मानेंगे। यदि मानेंगे; तब स्वामीजी अपनी 'ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका' के ६ पृष्ठमें किये हुए उक्त मन्त्रके 'तस्माद् यज्ञात् सच्चिदानन्दादिलक्षणात् पूर्णात् पुरुषाद् ऋग्वेदो यजुर्वेदः, सामवेदोथर्ववेदश्च, चत्वारो वेदास्तेनैव

प्रकाशिता इति वेद्यम्' इस अपने वेदके इतिहास बताने वाले अर्थको शतपथानुसार अशुद्ध माननेके लिए तैयार होंगे ? यदि नहीं; तब 'त्र्यायुषं जमदग्ने' इत्यादि मन्त्रमें भी जमदग्नि आदि पदोंका ऋषि-विशेष अर्थ भी नहीं हटाया जा सकता।

इस विषयमें स्वामीजी तथा उनके अनुयायिओं-को याद रखना चाहिये कि — ब्राह्मणभागकी शैली ही इस प्रकार की है कि — उसमें एक शब्दके अनेक अर्थ किये जाते हैं। लीजिये इसमें निरुक्तकार-की साक्षी 'बहुभक्तिवादीनि हि ब्राह्मणानि भवन्ति; अग्नि-र्वैश्वानरः, संवत्सरो वैश्वानरः, ब्राह्मणो वैश्वानरः' (७।२४।६) अन्य यह भी बात है कि — भक्तिवाद अथवा अर्थ-वादके कारण कई पदोंका 'आयुर्वै घृतम्' की तरह ब्राह्मणभागमें महत्त्व भी बतलाया जाता है; पर इससे 'घृत' शब्द 'आयु' का पर्यायवाचक नहीं बन जाता। ऐसा होने पर 'तेजो वै ब्रह्मवर्चसं गायत्री' (गोपथ० २।५।५) यहाँ पर गायत्री शब्द भी तेजका पर्यायवाचक बन जायगा। पर नहीं। जैसे 'आयुर्वै घृतम्' में घीको आयु माना गया है, वैसे ही 'चक्षुर्वै जमदग्निर्ऋषिः' यहाँ पर भी जमदग्नि ऋषिको चक्षुकी भांति श्रेष्ठ माना गया है। इससे जमदग्निका अभाव नहीं हो जाता; नहीं तो फिर घी भी आयुसे भिन्न न माना जा सकेगा, गायत्रीको भी तेजसे भिन्न न मानना पड़ेगा। कार्य कारण भाव आदि सम्बन्धोंका अभेद व्यवहार प्रसिद्ध ही है। अतः स्वामीजीका इतिहास हटानेका प्रयत्न विफल ही है।

'त्र्यायुषम्' इस मन्त्रका स्वामी जी ने यों अर्थ किया है — 'हे जगदीश्वर ! भवत्कृपया नोऽस्माकं जमद-ग्निसञ्ज्ञकस्य चक्षुषः, कश्यपाख्यस्य प्राणस्य च त्र्यायुषम् अर्थात् त्रीणि शतानि वर्षाणि यावत् तावदायुरस्तु। देवेषु—विद्वत्सु यद् विद्याप्रभावयुक्तं त्रिगुणमायुर्भवति, तन्नो अस्तु त्र्यायुषम्' इत्यादि (पृ० ८१) अर्थात् हमारी आँख तथा प्राण की ३०० वर्ष आयु हो, विद्वानों में जो तीन सौ वर्ष की आयु होती है, वह हमें भी मिले। स्वामी जी ने इस यजुर्वेदकी कण्डिकाके साथ जो बलात्कार किया है, यह खेदका विषय है। पूर्वार्धमें भी स्वामी जी ने 'न अस्तु' का सम्बन्ध बलपूर्वक जोड़ दिया। वास्तवमें मन्त्रभागसे इतिहास हटानेके लिए ही स्वामीजीको यह कृत्रिम-कल्पना करनी पड़ी। स्वामी जी ने यहां पर 'देव' का अर्थ विद्वान् किया है, और विद्वानोंकी आयु ३०० वा ४०० वर्षकी मानी है। इसमें प्रष्टव्य यह है कि — स्वा० दयानन्दजीके अनु-यायी स्वामी तुलसीराम; श्री पूर्णानन्द, श्री दर्शना-नन्द आदि आर्यसमाजके स्वर्गीय नेता तथा स्वयं स्वामीजी विद्वान् थे या नहीं ? यदि थे, तो इनकी आयु ३०० वा ४०० वर्षकी क्यों नहीं हुई ? यदि यह विद्वान् नहीं थे, तो क्या थे ?

उक्त मन्त्रमें जिन विद्वानोंकी ३०० वा ४०० वर्ष की आयु लिखी है वे विद्वान् उक्त मन्त्रसे पीछे हुए वा पहले ? यदि पहले हुए, तब मन्त्रभाग भी पीछेका बना सिद्ध हुआ, क्योंकि — स्वामीजीने स्वयं ही लिखा है — 'इतिहास जिसका हो, उसके जन्मके पश्चात् लिखा जाता है, वह ग्रन्थ भी उसके जन्मके पश्चात् होता है' (सत्यार्थ प्र० ७ पृ० १२७) यदि वे विद्वान् मन्त्रभागसे पीछे हुए, तब मन्त्रभागमें भी भविष्यत् इतिहास सिद्ध हो गया। फिर इतिहास आनेसे ब्राह्मण भाग ही वेदभिन्न कैसे हो जावेगा ?

स्वा० द० जीने ऋग्वेदमें 'अग्ने ! देवेषु प्रवोचः' (१।२७।४) इस मन्त्रके संस्कृतभाष्यमें लिखा है—'अग्ने—अनन्तविद्यामय जगदीश्वर ! देवेषु—सृष्ट्यादौ जातेषु पुण्यात्मसु अग्निवाय्वादित्याङ्गिरस्सु मनुष्येषु प्रवोचः प्रोक्तवान्' अर्थात् — हे परमात्मन् ! तुमने सृष्टिके आदिमें अग्नि, वायु, आदित्य तथा अङ्गिराको वेद दिये। यहाँ पर प्रष्टव्य है कि— क्या यह इतिहास नहीं ? यदि इस इतिहाससे मन्त्रभागकी वेदता क्षुण्ण नहीं होती, तब ब्राह्मणभाग भी इतिहास होने से वेद रह सकता है।

और देखिये — ऋग्वेदादिभाष्यभूमिकाके ३१५ पृष्ठमें स्वा० द० जीने लिखा है — "ननु इमं मे गंगे ! यमुने ! सरस्वतीति गङ्गादि नदीनां वेदे प्रतिपादनमस्ति, त्वया कथं न मन्यते ? अत्रोच्यते—मन्यते तु मया तासां

नदीसञ्ज्ञेति। ता गङ्गादयो नद्यः सन्ति, ताभ्यो यथायोग्यं जलशुद्ध्यादिगुणैर्यावान् उपकारो भवति; तावत् तासां मान्यं करोमि" यहां पर स्वामीजीने गङ्गा यमुना सरस्वती आदि नदियोंका नाम माना है। अब यह प्रष्टव्य है कि—'इमं मे गङ्गे यमुने सरस्वति' (१० । ७५ । ५) यह ऋग्वेदका मन्त्र है। अब यह मन्त्र गङ्गा आदि नदियोंके बाद बना वा पहले? यदि पहले बना, तब यदि पूर्वमन्त्रमें जमदग्नि कश्यय आदिका नाम परमात्माने उनके जन्मसे पहले रख डाला; तब वहां अर्थ परिवर्तनकी क्या आवश्यकता? इसी प्रकार ब्राह्मण भागमें भी मान लेना चाहिये।

भवभूति कविने उत्तररामचरितमें क्या ही ठीक लिखा है—

लौकिकानां हि साधूनामर्थं वागनुवर्तते ।
ऋषीणां पुनराद्यानां वाचमर्थोऽनुधावति ॥ (१ । १०)

अर्थात्—लौकिक-पुरुषोंकी वाणी पीछे होती है, पदार्थ उससे पूर्व होता है। पर आद्य ऋषियोंकी वाणी पहले होती है, पदार्थ पीछे बनता है। अर्थात् वे भविष्य पादर्थों का निरूपण पहले कर सकते हैं। वेद सर्वज्ञ भगवान्‌की वाणी है। सर्वज्ञकी दृष्टिमें भूत, भविष्यत्, वर्तमान-काल समान होते हैं। इधर वेदमें जिन ऋषि वा देवताओंका वर्णन हैं, वे प्रत्येक कल्प वा प्रत्येक मन्वन्तर वा प्रत्येक युगमें प्रवाह रूपसे बार बार उत्पन्न होते हैं। जैसे कि-वेदमें पृथ्वीका वर्णन है, पर वह प्रलयमें नष्ट हो जाती है, नये कल्पमें फिर वह वैसे बना करती है, वैसे ही वेदवर्णित देव, ऋषियोंकेविषयमें भी जानना चाहिये।

इधर वे ही वेदवर्णित देव, ऋषि अध्यात्म, अधिदैव, अधिभूत तीनों अवस्थामें रहनेसे भी नित्य माने जाते हैं, जैसे कि –'सप्तऋषयः प्रतिहिताः शरीरे' (यजु० ३४।५५) यहाँ पर सात प्राणरूप अध्यात्म ऋषि बताये गये हैं। आकाशस्थ सप्तर्षिमण्डलमें वे ही अधिदैव रूपसे हैं। इतिहासस्थ सात विश्वामित्र आदि ऋषि आधिभौतिक हैं। इस प्रकार आग्नेय प्राणरूप भी देवता हुआ करते हैं, तारामण्डलमें भी इन्द्र आदि देवता हुआ करते हैं — मनुष्य शरीरस्थ भी देव हुआ करते हैं, दिव्यलोकोंमें शरीरी तथा चेतन भी देवता हुआ करते हैं। इसी प्रकार सौम्यप्राणरूप भी पितर हुआ करते हैं, उसके आधार पर होने वाली ऋतुएं भी पितर हुआ करती हैं, प्रत्येक शरीरमें रहने वाले सन्तानोत्पादक भाव भी पितर हुआ करते हैं, शरीर त्यागके बाद सूक्ष्मशरीरसे परलोकमें जाने वाले जीव भी पितर हुआ करते हैं। इन सबके आपसमें सम्बन्ध हुआ करते हैं। तब इनकी नित्यता होनेसे वेदमें इनका वर्णन आनेसे वेदकी अनित्यता नहीं हो जाया करती।

अब वेदोंमें इतिहास होनेमें हम स्वा० द० जी का स्पष्ट प्रमाण इस विषयमें लिखते हैं—'स्वामीजी ने ऋग्वेदादि भाष्यभूमिकाके इसी प्रकरणमें ८२-८३ पृष्ठमें लिखा है — 'तमितिहासश्च पुराणं च गाथाश्च नाराशंसीश्च अनुव्यचलन्' (अथर्व वेद १५।३०।१) 'इतिहासस्य च ···· वै स पुराणस्य च प्रियं धाम भवति य एवं वेद' (अथर्व० १५।३०।४ षष्ठपर्याये १२) एतैः प्रमाणैः ब्राह्मणग्रन्थानामेव ग्रहणं जायते, न श्रीमद्भागवतादीनामिति'।

अब यहां स्वामीजीसे प्रष्टव्य है कि — अथर्ववेदके इतिहास पुराण शब्दसे जब ब्राह्मणभागका ही ग्रहण है; तब यह मन्त्र ब्राह्मणभाग बनानेके बाद बना, वा उससे पहिले? इसमें स्वामीजीका जो उत्तर होगा; वही उत्तर ब्राह्मणभाग-स्थित इतिहासका भी हो जाएगा। यदि स्वामीजी ब्राह्मणभाग को वेदत्वसे इसलिये पृथक् करते हैं कि — इसमें इतिहास है; तब उसी प्रकारसे उन्हें स्वसम्मत-मन्त्रभागको भी वेदत्वसे पृथक् करना पड़ेगा, क्यों कि — इतिहासादिसे युक्त ब्राह्मणभागका नाम परमात्माने अपने मन्त्रभागमें जो लिखा; तो मन्त्रभाग उसके पीछेका बनाया सिद्ध होगा, क्योंकि स्वयं स्वामीजी लिख गये हैं — 'इतिहास जिसका हो; उसके जन्मके पश्चात् लिखा जाता है, वह ग्रन्थ भी उसके जन्मके पश्चात् होता है' (स० प्र०

७ पृ० १२७) यदि स्वामीजी भविष्यत् का विचार करके ऐसा माननेको तैयार नहीं; तब 'ब्राह्मणानां पुराणेतिहास सञ्ज्ञकत्वाद्' यह स्वामीजीका ब्राह्मणभाग के अवेदत्व साधनमें दिया गया हेतु स्वयं निरस्त हो गया। आश्वलायनगृह्यसूत्र अ० ३ पञ्चयज्ञ-प्रकरणमें 'ऋचोयजूंषि सामानि अथर्वाङ्गिरसो ब्राह्मणानि ···· इतिहास पुराणानि' यहाँ पर पुराण इतिहासको ब्राह्मणभागसे पृथक् बताया गया है। तैत्तिरीयारण्यक २ प्र० ६ अनु० २ 'ब्राह्मणानि इतिहासान् पुराणानि' यहाँ पर भी ब्राह्मणभागसे पृथक् ही इतिहास पुराण बताये गये हैं। इसी प्रकार गोपथ ब्राह्मणमें भी 'एवमिमे सर्वे वेदा निर्मिताः····सब्राह्मणाः, सेतिहासाः, सपुराणाः' (१।२।१०) यहाँ पर भी ब्राह्मण-भागको इतिहासपुराणसे पृथक् ही कहा गया है। न्यायदर्शनका प्रमाण इस विषयमें पहले लिखा ही जा चुका है। तब स्वामीजीका 'पुराणेतिहाससंज्ञक-त्वात्' यह हेतु निरस्त होगया।

स्वामीजीका एक हेतु और भी है — वह है — 'कात्यायनभिन्नैर्ऋषिभिर्वेदसंज्ञायामस्वीकृतत्वात् (५) 'अतो [कात्यायनाद्] अन्यैर्ऋषिभिरग्रहीतत्वात् (?)' अर्थात् — एक कात्यायनके अतिरिक्त अन्य किसी ऋषिने ब्राह्मणभागको वेद नहीं माना। अब हम इस विषयमें अन्य प्राचीन प्रमाण उपस्थित करते हैं; जिनसे पाठकोंको प्रतीत हो जावेगा कि — स्वामीजीका यह हेतु भी सफल नहीं हो सका। देखिये —

१ ब्राह्मणभागकी वेदतामें १ कात्यायन की साक्षी तो स्वामीजी मान ही चुके हैं। दूसरी और तीसरी साक्षी न्यायदर्शनके सूत्रकार वा भाष्यकारकी हम पहले दे ही चुके हैं। इसी प्रकार चौथी, पांचवीं, छठी अष्टाध्यायी सूत्रकार पाणिनि, वार्त्तिककार वररुचि, भाष्यकार पतञ्जलिकी साक्षी हम पूर्व दे ही चुके हैं। अब और साक्षियें देखिये —

७ 'तच्चोदकेषुमन्त्राख्या' (२।१।३२) मीमांसा-दर्शनके इस सूत्रमें जैमिनि मुनिने वेदके एक भाग मन्त्रका लक्षण दिया है। 'शेषे ब्राह्मणशब्दः' (२।१।३३) इसमें वेदके मन्त्रभागसे अवशिष्ट ब्राह्मणभागका लक्षण दिया है। इसलिये दोनों ही भाग वेद हुए; नहीं तो 'शेष' पद व्यर्थ हो जाएगा; 'नलचम्पू' का शेष 'उत्तर मीमांसा' नहीं हो सकती। इसी प्रकार ब्राह्मणभाग भी वेदसे अन्यका शेष नहीं हो सकता। कई लोग इसी लक्षणसे ब्राह्मणको वेदसे भिन्न सिद्ध करते हैं; उनका आक्षेप तथा परिहार आगे लिखा जाएगा।

८ जैमिनिसूत्रोंके विख्यात व्याख्याता भाष्यकार शबर स्वामीने भी लिखा है — 'मन्त्राश्च ब्राह्मणं च वेदः। तत्र मन्त्रलक्षणे उक्ते परिशेषसिद्धत्वाद् ब्राह्मण-लक्षणमवचनीयम्। मन्त्रलक्षणवचनेनैव सिद्धम्।' (मीमांसा० २।१।३३) ६ 'आम्नायः पुनर्मन्त्राश्च ब्राह्मणानि च। (१।३) यह अथर्ववेदके कौशिकसूत्र का मत है।

१० 'मन्त्रब्राह्मणं वेद इत्याचक्षते, मन्त्रब्राह्मणयोर्वेद-नामधेयम्' (२।६ २-३, ३।२।६३) यह बौधानीय गृह्यसूत्रका लेख है। ११ 'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' (२४।१।३१) यह आपस्तम्बश्रौतसूत्रका मत है। १२ 'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनामधेयम्' (१।१।७) यह सत्याषाढ श्रौतसूत्रका लेख है। १३ 'मन्त्रब्राह्मणयोराहुर्वेदशब्दं महर्षयः' यह सर्वानुक्रमणिकावृत्तिकी भूमिका में षडगुरुशिष्यके शब्द हैं। १४ 'मन्त्रब्राह्मणा-त्मकत्वं तावद् वेदस्य अदुष्टं लक्षणम्' यह ऋग्वेदभाष्य के उपोद्घातमें सायणका वचन है। १५ यास्कमुनि के निरुक्तके प्रमाण पहले उद्धृत किये हो जाचुके हैं। १६ 'वैदिकप्रयोगदर्शनात्—श्रद्धा वा आपः' (३।१।५) इस वेदान्तदर्शनके भाष्यमें स्वामी श्री शङ्कराचार्यने ब्राह्मणभागको वेद माना है।

१७ 'स्याद् वा आम्नायधर्मित्वात् छन्दसि नियमः' (१।४) इस वाजसनेयि प्रातिशाख्यसूत्रके व्याख्यान के अवसर पर उव्वटने 'आम्नायो वेदः' यह कहकर 'ब्राह्मणं विध्यर्थवादरूपम्, मन्त्रस्तु कर्माङ्गभूतद्रव्यदेवतास्मारकः' यहाँ दोनों ही भागोंको आम्नाय (वेद) माना है। १८ प्रस्थान भेदके प्रणेता श्री मधुसूदनने भी कहा है—"धर्मब्रह्मप्रतिपादकमपौरुषेयं प्रमाण-वाक्यं

वेदः । स च मन्त्र ब्राह्मणात्मकः । १६ 'साक्षात्कृत-धर्माण ऋषयो बभूवुः । तेऽवरेभ्योऽसाक्षात्कृतधर्मभ्य उपदेशेन मन्त्रान् सम्प्रादुः । उपदेशाय ग्लायन्तोऽवरे विल्मग्रहणाय इमं ग्रन्थं समाम्नासिषुः, वेदञ्च वेदाङ्गानि च' इस निरुक्त पाठको लेकर श्रीसत्यव्रत सामश्रमी ने 'निरुक्तालोचन' के २५वें पृष्ठमें लिखा है— 'यतोऽत्र मन्त्रान् सम्प्रादुः, इति कथनानन्तरमेव पुनरुक्तं 'वेदं च' इति, अतो ज्ञायते – नेह वेदशब्देन मन्त्राणां बोधोऽपि तु तदतिरिक्तभागानां ब्राह्मणानामेव'।

२० 'उदितेऽनुदिते चैवं समयाध्युषिते तथा।
सर्वथा वर्तते यज्ञ इतीयं वैदिकी श्रुतिः ॥
मनु० २ । १५

यहाँ पर मनुने ऐतरेयादि ब्राह्मणभागमात्र (५ । २६) में लिखे गये उदितहोम के वचनको 'वैदिकी श्रुति' कहकर ब्राह्मणभागको वेद मान लिया है। इसी प्रकार 'राज्ञश्च दद्युरुद्धारमित्येषा वैदिकी श्रुतिः' (७।९७) यह मनु प्रोक्त वैदिक श्रुति भी ब्राह्मणभागमें सुलभ है, मन्त्रभागमें नहीं। स्वामी दयानन्दजीने मनुस्मृतिको सृष्टिके आरम्भमें बना हुआ माना है। देखिये उनके शब्द—"यह मनुस्मृति जो सृष्टिकी आदिमें हुई है—उसका प्रमाण है" (सत्यार्थप्रकाश ११ समुल्लासका आरम्भ पृष्ठ १७२) जब स्वामीजीके मतमें मनुस्मृति सृष्टिको आदिमें बनाई गई है; तब ब्राह्मणभागमें वेदत्व-व्यवहार भी सृष्टिके आदिमें हुआ। केवल स्वा० द० ने ही मनुको सृष्टिके आदिमें नहीं माना, प्रत्युत उनके मान्य श्रीमान् यास्कने भी 'विसर्गादौ (सृष्टि की आदिमें) मनुः स्वायम्भुवो ब्रवीत् (३ । ४ । २) यहाँ पर मनुको सृष्टिके आदिकालमें माना है। मनुस्मृतिका प्रवक्ता भृगु भी सृष्टिके आदिमें ही हुआ है—इस विषयमें मनुस्मृतिका १।३५ पद्य देखना चाहिये। तब ब्राह्मणभाग भी सृष्टिकी आदि ही से वेद हुए।

२१ 'एकदेशं तु वेदस्य' (२ । १४१) इस मनु-पद्यमें कुल्लूकभट्टने भी ऐसा ही माना है—'वेदस्य एकदेशं-मन्त्रं ब्राह्मणं च'। इसी प्रकार मेधातिथि, राघवानन्द, नन्दन, रामचन्द्र आदि टीकाकारोंने लिखा है—'समग्रवेदो मन्त्रब्राह्मणात्मकः'। मेधातिथिने भी कहा है—'वेदशब्दो मन्त्रब्राह्मणवाक्यस्य समुदायात्मिकां शाखामाचष्टे। 'अतऊर्ध्वं तु छन्दांसि' ४ । ९८ मनुपद्यकी, टीकामें भी कुल्लूकभट्टने कहा है— 'छन्दांसि-मन्त्रब्राह्मणात्मकं वेदम्'। मेधातिथिने भी लिखा है—'मन्त्रब्राह्मणवाक्यसमुदायात्मकान् वेदान् पठेत्'।

२२ 'विध्यर्थवादानुवादवचनविनियोगात्' (२।१।६१) इस न्यायदर्शनसूत्रकी वृत्तिमें विश्वनाथने भी कहा है—'वेदे वाक्यविभागं दर्शयति—मन्त्रब्राह्मणभेदाद् द्विधा वेदः। तत्र ब्राह्मणस्याऽयं विभागः .... तथा च विध्यादि भेदाद् ब्राह्मणभागस्त्रिधा। २३ शुक्रनीतिमें कहा है— 'मन्त्रब्राह्मणयोर्वेदनाम प्रोक्तमृगादिषु' (४ । २७१) शुक्रनीतिको स्वा० द० जी भी प्रमाण मान गये हैं। २४ "बुद्धिपूर्वा वाक्य-कृतिर्वेदे' (वैशेषिकदर्शन ६।१।१) इस सूत्रके भाष्यमें 'स्वर्गकामो यजेत' इस ब्राह्मण-वाक्यको वेद नामसे कहा गया है, तब कणादके मतमें भी ब्राह्मणभाग वेद सिद्ध हुआ। २५ याज्ञ-वल्क्यस्मृतिके प्रायश्चित्तप्रकरणमें ५।२४६ पद्य की मिताक्षरामें भी कहा गया है— 'मन्त्रब्राह्मणात्मकं वेदम्—'। याज्ञवल्क्यस्मृतिके श्राद्ध प्रकरणमें भी 'वेदार्थवित्' २१६ श्लोककी मिताक्षरामें श्रीविज्ञानेश्वरने कहा है— 'मन्त्रब्राह्मणयोरर्थं वेत्तीति वेदार्थवित्।' (२६) 'श्रुतेस्तु शब्दमूलत्वात्' (वेदान्तदर्शन २।१।२७) इत्यादि बहुत सूत्रोंके श्रुति प्रमाणमें ब्राह्मण-भाग तथा उसके अन्तर्गत उपनिषदोंका प्रमाण दिया गया है। श्रुति कहते हैं वेदको; देखिये — 'श्रुतिस्तु वेदोविज्ञेयः' (मनु० २।१०)

२७ अन्य यह भी देखना चाहिये, मनुने कहा है — 'वेदोऽखिलो धर्ममूलम्' (२ । ६) महाभारत वनपर्वमें भी कहा है — 'श्रुतिप्रमाणो धर्मः स्यात्' (२०६।४१) इत्यादि वचनोंसे सम्पूर्ण वेदको धर्मका मूल माना गया है। धर्मका लक्षण मीमांसा-दर्शनमें कहा गया है — 'चोदनालक्षणो धर्मः' (१ । १ । २) तर्कसंग्रहके गुणनिरूपणमें भी कहा है — 'विहित-

कर्मजन्यो धर्मः'। चोदना हुआ करती है 'स्वर्गकामो यजेत, अहरहः सन्ध्यामुपासीत, अष्टवर्षं ब्राह्मणमुपनयीत' इत्यादि विधियें मन्त्रभागमें तो कुर्यात्, क्रियेत, कर्तव्यं, भवेत्, स्यादिति पञ्चमम्। एतत् स्यात् सर्ववेदेषु नियतं विधिलक्षणम्' (मीमांसादर्शन ४।३।३) इन विधियोंका सद्भाव प्रायः नहीं है, प्रार्थनाएं ही वहां दीखती हैं। विधियोंका सद्भाव ब्राह्मणभागमें है। तो मन्त्रभागमें विधियें न होने से 'वेदोखिलो धर्ममूलं' मनु० २। ६ 'एतत् स्यात् सर्ववेदेषु नियतं विधिलक्षणं' (मीमांसादर्शन ४।३।३) इन विधियोंका सद्भाव प्रायः नहीं है, प्रार्थनाएं ही वहां दीखती हैं। विधियोंका सद्भाव ब्राह्मणभागमें है। तो मन्त्रभागमें विधियें न होने से 'वेदोखिला धर्ममूलं' मनु० २।६। 'एतत् स्यात् सर्वं वेदेषु नियतं विधिलक्षणम् (मीमांसादर्शन ४।३।३)। श्रुतिस्मृत्युदितं धर्ममनुतिष्ठन् हि मानवः।....प्रेत्य चानुत्तमां गतिम्' (मनु० २। ९) यह मुनियोंकी उक्तियें निर्विषय अथवा व्यर्थ हो जाएं, यदि ब्राह्मणभागको वेद न माना जावे। इस लिये 'धर्मं जिज्ञासमानानां प्रमाणं परमं श्रुतिः' (२।१३) इस मनुके पद्यमें 'श्रुति' शब्दसे वेदके ब्राह्मणभागका ही ग्रहण है, क्योंकि— विधिरूप धर्म्म स्पष्टतया ब्राह्मणभागमें ही मिलता है। तब ब्राह्मणभाग भी वेदसिद्ध हुआ।

२८ मीमांसादर्शन साक्षात् वेदका व्यवस्थापक माना गया है। उसमें 'अथातो धर्मजिज्ञासा' (१।१।१) से आरम्भ करके 'अन्वाहार्ये च दर्शनात्' (१२।४।४२) इस सूत्र तक १२ अध्याय हैं। इनमें तीसरे, छठे, दसवें अध्यायोंमें आठ आठ पाद हैं; शेष अध्यायोंमें चार-चार पाद हैं। इस प्रकार ६० पादों वाले इस दर्शनमें प्रायः नौ सौ ९०० अधिकरण हैं। इनमें प्रायः ब्राह्मणभागके वाक्य ही उदाहृत किये गये हैं। मन्त्रभागके वाक्य तो इनमें अंगुलियों पर गिनने योग्य हैं।

मीमांसादर्शनमें पौरुषेय कहे जाने वाले स्मृति इतिहास आदिकी मीमांसा नहीं है, किन्तु उसमें अपौरुषेय वेद वाक्यों पर ही विचार किया गया है। यदि ब्राह्मणभाग वेद न होता; तो 'मीमांसा नाम वेद-विचारः' 'एवं वेदवाक्यान्येव एभिर्व्याख्यास्यन्ते' (मी० १।१।१) इत्यादि परिभाषाएं न होतीं। उत्तरमीमांसा (वेदान्त-दर्शन) में भी प्रायः ब्राह्मणभाग ही प्रमाणित किया गया है। इससे स्पष्ट है कि ब्राह्मणभाग वेद है। नहीं तो वेदकी व्यवस्था-प्रकाशनार्थ ब्राह्मणभागका अवलम्बन करने वाले दार्शनिक मुनियोंको प्रमत्त मानना पड़ जाएगा।

'आम्नायस्य क्रियार्थत्वात्' (१।२।१) इस मीमांसा दर्शनके सूत्रमें अर्थवादात्मक ब्राह्मणभागको आम्नाय (वेद) माना गया। इसी प्रकार 'औदुम्बरो यूपो भवति' १।२।१९ सूत्रभाष्यमें कहे हुए विधिवन्निगद अर्थवाद १।२।२० सूत्रके भाष्यमें 'तद्वद् वेदेपि भविष्यति' इस प्रकार वेद शब्दसे कहे गये हैं। 'वेदे व्यक्रमसंवादः ऊर्जो ऽवरुद्ध्यै इत्यप्रसिद्धं वचनम्, ऊर्वा उदम्बर इति हेतुत्वं चाप्रसिद्धम्। (मीमां० १।२।२१) यहां पर 'वेदे' कह कर ब्राह्मणभाग ही उदाहृत किया है। 'शूर्पेण जुहोति, तेन ह्यन्नं क्रियते सत्यमेवं लोके, विधायिष्यते तु वचनेन वेदे' (मीमांसा १।२।२६) यहां पर भी ब्राह्मणभाग को वेद कहा गया है। 'उक्तं हि समाम्नायैदमर्थ्यम्' (१।४।१) यहां पर विधि-अर्थवाद युक्त ब्राह्मणभाग को समाम्नाय (वेद) कहा गया है। इसी प्रकार.....'तत्सामर्थ्यं समाम्नाये' (१।४।१७) यहां पर 'वैश्वानरं द्वादशकपालं निर्वपेत्' इस ब्राह्मणभाग वचनको समाम्नाय (वेद) कहा गया है।

'श्रस्त्वेकेषां तत्र प्राक् श्रुतिगुणार्था, (मी० ३।६।२०) इस सूत्र में 'आग्नेयं पशुमालभते' इस 'ब्राह्मण' को श्रुति (वेद) माना गया है। 'श्रुति तो व्यपदेशाच्च' (४।४।३४) इति सूत्र में 'दर्शपूर्णमासाभ्यां स्वर्गकामो यजेत' इस ब्राह्मण को 'श्रुति' कहा गया है। कर्तुर्वा श्रुतिसंयोगात्' (६।१।५) यहां पर ब्राह्मणभाग के विधिवाक्य श्रुति (वेद) शब्दसे कहे गये है।

'अपि वा वेदनिर्देशादपशूद्राणां प्रतीयेत' (६।१।३३) इस मीसांदर्शनके सूत्रमें वेदे हि त्रयाणां निर्देशो भवति—वसन्ते ब्राह्मणमुपनयीत, ग्रीष्मे राजन्यं, वर्षासु वैश्यम्' इस ब्राह्मणके वचनको वेदवचन माना गया है। 'विधौ तु वेदसंयोगात्' (६।७।२६) यहां पर 'भाषान्मे

मर्यादापुरुषोत्तम भगवान् श्रीराम

[लेखक—श्री पं० गोपाल जी शर्मा शास्त्री साहित्याचार्य]

भगवान् रामका चरित्र बड़ा ही पवित्र और पावन है। जब विपत्ति पड़ती है और मनुष्यके अन्तस्तलमें चोट पहुँचती है तब अनायास ही राम-नाम मुँहसे निकल पड़ता है। इसका कारण क्या है ? क्या किसी ने विचार किया ? इसमें बहुत बड़ा तत्त्व है। राम-राज्यमें समस्त प्रजा सुखी थी। किसीको भी किसी प्रकारका कष्ट नहीं था। केवल एक ब्राह्मणकुमारकी मृत्यु उसके पिताके सामने हो गई थी, उस समय उस तपस्वी ब्राह्मणने अपने पुत्रका शव राज-द्वारके सामने लाकर डाल दिया था और पुकार कर कहा था कि राजाके पापसे मेरे पुत्रकी मृत्यु हुई है। राम-राज्यमें यही केवल एक उदाहरण ऐसा मिलता है, किन्तु आज ! ऐसा प्रायः कोई घर नहीं, जो इस प्रकारके दुःखोंसे संतप्त न हो। इसीसे हम अनुमान लगा सकते हैं कि भगवान् रामके राजत्वकालमें प्रजामें आनन्द और सुखोंका स्रोत उमड़ता था। आज भी कहीं किसी राजाकी प्रजामें स्वल्प सुखकी छाया दिखाई देती है, उस समय तत्काल राम-राज्य याद आ जाता है। अर्थात् आदर्श राष्ट्रकी उपमा राम-राज्यसे दी जाती है। यही कारण है कि कष्ट पड़ते ही राम-नामका उच्चारण होता है और अध्यात्म-विज्ञानकी तन्त्री तत्क्षण यह अनुभव करा देती है कि रामके राज्यमें सर्वथा दुखःका अभाव था।

राजनैतिक दृष्टिसे आज भी राम राष्ट्रके आदर्श हैं। बहुतसे राजा महाराजा भारतवर्षमें हुए और चले गये, परन्तु भारतीय जनताके वास्तविक राजा तो आज भी राम हैं। उन मर्यादा-पुरुषोत्तमका साम्राज्य पशुबल पर स्थापित नहीं था। रामराज्य वास्तवमें प्रजा राज्य था। राजाका सुख और परमपुरुषार्थ केवल लोक-मङ्गलमय था। रामकी राज्यप्रणालीमें शासक और प्रजाके विरोधका सर्वथा अभाव था। दोनों धर्मके बन्धनमें बन्धे थे। सेवा-धर्म ही दोनोंका धर्म था। राजा आतङ्क उत्पन्न करने वाला स्वामी नहीं, किन्तु प्रजाका सच्चा सेवक था। प्रजा असंतुष्ट, उच्छ्ङ्खल और विप्लवी नहीं, अपितु प्रसन्न, संयत और विनयशील थी। राजाको प्रजासे न पापकी चिन्ता और न प्रजाको राजदंडका भय था। यह राजा और प्रजाका पवित्र सम्बन्ध था। इसीलिये आज भी हमारे ऊपर राम-राज्यकी छाप है।

प्रजाको सुखी और सन्तुष्ट रखनेका भगवान्का कठोर व्रत था। सीताहरण रामके लिये एक व्यक्तिगत घटना नहीं थी, किन्तु एक भारतीय महिलाका अपमान तथा लज्जा और मर्यादाका अपहरण था। अपनी खोई हुई मर्यादाकी रक्षाके लिये भगवान्ने लङ्कापर चढ़ाई की थी। इस प्रयत्नमें उन्होंने विरोधियोंका संहार किया और सीताको वापस लाये, किन्तु इस विजयमें दूसरे देशकी स्वतन्त्रता को नष्ट-भ्रष्ट कर वहाँकी राज्यलक्ष्मीको अपने हस्तगत करनेका भाव उनका बिलकुल नहीं था, इसीलिये अत्याचारी मदान्ध

पचत' इस ब्राह्मणवचनको आम्नाय (वेद) माना गया है। आम्नाय वचनं तद्वत्'' (११।२।४१) यहां पर 'दयेवाध्वर्युःकरोति' इस ब्राह्मणको वेद माना गया है। 'आम्नायवचनाच्च' (मीमांसा १२।४।३२) इस मीमांसा दर्शनके सूत्रमें 'यो वै सत्रे बहूनां यजमानानां गृहपतिः' इत्यादि ब्राह्मणभागके वचनको आम्नाय माना गया है। ३।४।२८ मीमांसासूत्रमें 'पौण्डरीके अश्वसहस्रं दक्षिणा, ज्योतिष्टोम गौश्चाश्वश्च' यह वैदिक अश्व प्रतिग्रह बतलाया गया है। यह मन्त्रभाग में नहीं किन्तु ब्राह्मण भाग में है, इस कारण ब्राह्मण भाग वेद सिद्ध हुआ। (क्रमशः)

रावणका वध कर उन्होंने लङ्काके राज्यसिंहासन पर विभीषणको बैठाया। क्या यह ऐसी घटना नहीं है, जो हमको अपने राष्ट्रकी स्वतन्त्रता और प्रतिष्ठाकी रक्षाके लिये सदा उत्तेजित करती रहेगी, परन्तु साथ ही साथ दूसरोंके स्वत्वापहरणसे रोकेगी।

भगवान् रामचन्द्रने मनुष्यका चोला धारण कर मनुष्यके कर्तव्यकी सीमा बांध दी और मनुष्यजातिको वह आदर्श दिखा दिया, जिससे संसारमें वास्तविक श्रेष्ठता प्राप्त होसकती है। श्रीरामके कीर्तिमन्दिरकी नींवके पत्थरोंमें मानो ये ही शब्द लिखे हैं कि—'मातृदेवोभव, 'पितृदेवोभव, 'आचार्यदेवोभव, और इस उत्कृष्ट गुणका उन्होंने पूरा निर्वाह किया। वनवासके समयकी श्रीरामकी वीरोक्ति ही इस विषयमें प्रमाण है।

नियुक्तो गुरुणा पित्रा नृपेण च हितेन च।
भक्षयेयं विषं तीक्ष्णं पतेयमपि पावके॥
तद्ब्रूहि वचनं देवि! राज्ञो यदभिकांक्षितम्।
करिष्ये प्रति जाने च रामो द्विर्नाभिभाषते॥
(बा० रा०)

अर्थात् हितैषी पिताकी आज्ञा होने पर मैं हलाहल विषको भक्षण कर सकता हूँ। जलती हुई अग्नि और समुद्रमें कूद सकता हूँ। हे माता! पिताके अभिप्रेत वचनोंको कहिये, मैं प्रतिज्ञा करता हूँ कि उनका यथावत् पालन करूँगा। राम एकबार कही हुई बातको दूसरी बार नहीं कहता। कितने ओजपूर्ण वाक्य हैं।

विमाताके वशीभूत पिताकी आज्ञा मानकर वनको चला जाना, चाहे और देशवालोंके समझमें न आवे, किन्तु धर्मप्राण हिन्दू-जाति इस प्रकारके सर्वस्व-त्याग-रहस्यको भली प्रकार जानती है। पुत्र पितासे अधिकार की माँग उपस्थित नहीं करता, वह तो अपने पिताके प्रति कर्तव्योंका पालन करता है। वन-गमनकी आज्ञा सुनकर राम खिन्न नहीं हुए। महर्षि बाल्मीकिने इस प्रसङ्गको कितनी सुन्दरतासे अङ्कित किया है।

न वनं गन्तुकामस्य त्यजतश्च वसुन्धराम्।
सर्वलोकातिगस्येव लक्ष्यते चित्त विक्रया॥ (बा०रा०)

सार्वभौम राज्यको त्याग कर वनको जाते हुए, उस जीवन्मुक्त महात्माके चित्तमें किसी प्रकारका विकार उत्पन्न नहीं हुआ। इसी प्रसङ्गको प्रातःस्मरणीय स्वनामधन्य श्रीगुसांईजी महाराजने कितने सरल रूपसे वर्णन किया है। जब कौशल्या माताको भगवान् वनगमनकी पिताकी आज्ञा सुनाते हैं, तब कहते हैं—

पिता दीन्ह मोहि कानन राजू।
जहँ सब भांति मोर बड़ काजू॥
आयसु देहु मुदित मन माता।
जेहि मुद मङ्गल कानन जाता॥

स्वार्थ-त्यागका कितना ज्वलन्त उदाहरण है। भाग्यवश जब रघुनाथजी के बनवास का कलङ्क कैकेयी को लगा, तब भी भगवान् रामने उनकी प्रशंसा की और वनमें भी उनका स्मरण किया। जब रघुवीर दशाननका वध कर बनवाससे वापस अयोध्या आये, तब कैकेयी लज्जित होगई और उसके पश्चात्तापकी सीमा न रही, किन्तु भगवान्ने जब देखा कि माता लज्जित होरही है, तब कहते हैं।

युक्तं कृतं हि कैकेय्या यदहं प्रेषितो वने।
स्त्रियमेकां न यो रक्षेत् स कथं पालयेन्महीम्॥
(बा० रा०)

हे माता! तुमने मुझे वनको भेजकर बड़ा अच्छा कार्य किया। जो मैं वनमें एक स्त्रीकी भी रक्षा नहीं कर सका, वह उस अवस्थामें सारी पृथ्वीकी रक्षा किस प्रकार कर सकता है। इस प्रकार ऐसी समुचित शिक्षा के लिये माताको हृदयसे धन्यवाद देकर कहते हैं—

तातस्नेह भरतमहिमा पौरुषं वायुसूनोः।
सख्यं भावं प्लवगनृपतेश्चापि सौमित्रि भक्तिः॥
सीता सत्यं निज भुजबलं वैरिणां दुःखभावो।
ज्ञातं सर्वं तव चरणयोरेव मातः! प्रसादात्॥

अर्थात् हे माता! तुम्हारे चरणोंके प्रसादसे मुझे इतनी बातोंका अनुभव हुआ है। राजा दशरथने सिखाया कि पिता पुत्रको प्राण देनेकी सीमा तक भी प्यार कर सकता है। भरतने सिखाया कि बिना आडम्बरसे राज्यका शासन किस प्रकार किया जा सकता

है। हनुमान्ने बताया कि वनचर होकर भी कोई समुद्र को लंघन कर सकता है और पर्वतको उठा संजीवनी को लाकर मृतकको जिला सकता है। वानरोंके राजा से भी उत्कृष्ट सखाभाव किया जा सकता है। भाईकी किस सीमा तक भक्ति हो सकती है, इसका निदर्शन लक्ष्मणने किया। स्त्रियोंमें सत्य शील और सतीत्व किस ऊंची सीमा तक पहुँच सकता है, इसका उदाहरण सीतामें देखा। पुरुषमें कितना बल होता है, यह अपनी भुजाओंमें देखा। शत्रु लोग किस प्रकार कितना दुःख दे सकते हैं, यह भी सब वनवास काल हीमें देखा। हे माता! यह राज्योपयोगी ज्ञान मुझको पहले नहीं था, अब तुम्हारे चरणोंकी कृपासे प्राप्त हुआ। यहाँ भगवानके साधु-स्वभावकी पराकाष्ठा हो जाती है।

अयोध्यामें आ कर भगवान्ने कैसा राज्य किया? यह रामचरित्र प्रेमियोंसे छिपा नहीं है, फिरभी भगवान्के राज्यमें प्रजाकी कैसी स्थिति थी, इसका कुछ दिग्दर्शन कराकर इस लेखको समाप्त करता हूँ। श्री गुसांईजी महाराज रामचरित मानसमें वर्णन करते हैं—

राम राज्य नभगेश! सुनु सचराचर जग मांहि।
काल कर्म स्वभाव गुनुकृत दुख काहु हि नांहि॥
दैहिक दैविक भौतिक तापा।
रामराज्य नहीं काहु हि व्यापा॥
अल्प-मृत्यु नहि कवनि हुं पीरा।
सब सुन्दर सब निरुज शरीरा॥
एक नारिव्रत सब नर नारी।
ते मन वच कर्म पति हितकारी
फूल हिं फलहिं सदा तरु कानन।
रहत एक संग गज-पञ्चानन॥
नहिं दरिद्र कोउ दुखी न हीना।
नहिं कोउ अबुध न लक्षण हीना॥
खग-मृग-सहज बेर बिसराई।
सबहि परस्पर प्रीति बढ़ाई॥
विधु महिं पूर मयूख नहिं रवि तप जेतनेहिं काज।
मांगे बारिद देहिं जल, रामचन्द्र के राज॥

भुवन अनेक रोम प्रति जासु।
यह प्रभुता कछु बहुत न तासु॥
दंड जतिन्ह कर भेद जहं, नर्तक नृत्य समाज।
जीतहिं मन अस कहिय जग रामचन्द्रके राज॥

पाठक! श्री गुसांईजी महाराजने रामराज्यका कितना सुन्दर वर्णन किया है। उक्त अन्तिम दोहे में गुसांईजी कहते हैं कि रामराज्यमें दण्ड यतियों और सन्यासियोंके हाथमें रह गया था, क्योंकि राजा प्रजाके संयत रहनेसे और जगह दण्ड शब्द व्यवहार में ही नहीं आता था, और भेद भाव नाटकके पात्रोंमें रह गया था, एवं जीतनेको केवल मन रह गया था। इस प्रकार भक्तशिरोमणि महात्मा तुलसीदासने जो वर्णन किया है, उसमें कुछ भी अत्युक्ति नहीं है। भगवान् मर्यादा पुरुषोत्तम रामने राजसिंहासन पर बैठते ही यह घोषणा कर दी थी कि—

स्नेहं दयां च सौख्यं च यदि वा जानकीमपि।
आराधनाय लोकस्य मुञ्चतो नास्ति मे व्यथा॥
(भवभूतिः)

स्नेह, दया, भोग, सुख और आवश्यकता पड़ने पर जानकीको भी प्रजाकी भलाईके लिये त्याग करते मुझे कुछ भी दुःख नहीं होगा। राजा प्रजाकी मर्यादा रक्षाका कितना सुन्दर आदर्श है।

भगवान् रामका अवतार लोक-संग्रहके लिए हुआ था। उन्होंने अत्याचारी राक्षसोंका संहार कर प्रजाकी रक्षा की थी। त्रेतायुगकी चैत्र शुक्ला नवमीको मध्याह्नमें जगत्को सुख देने वाले करुणा वरुणालय भगवान रामका अवतार हुआ था। रामनौमी उन्हीं मर्यादा पालक भगवान् रामचन्द्रका जन्म दिवस है। यह हिन्दू मात्रके लिए बड़े गौरवका दिन है। इस दिन प्रत्येक हिन्दूको व्रती रह कर भगवन्नामका जप करना चाहिये। कलियुगमें नाम जपसे अधिक हित कर दूसरा कोई मन्त्र नहीं है। अतः राम नामका जप करते हुए भगवान्से सम्मिलित हो कर प्रार्थना करनी चाहिये और भगवान्के निर्मल चरित्रोंका बखान करना चाहिये।

रामनवमी प्रतिवर्ष आती है और चली जाती है, परन्तु भगवान् नहीं आते ? उस समय भगवान् आये थे, रावण का वध करके समाजको सुसंगठित करनेके लिए, राजाओंको आदर्श राज्यकी शिक्षा देनेके लिए, किन्तु आज भी तो वही दशा है। न जाने कितने रावण भगवान्की लीला भूमिको अपवित्र बना रहे हैं। गोवंशकी गर्दन पर अत्याचारियोंकी तलवार चल रही है। साधुओंका दलन हो रहा है। समाज उच्छृंखल हो रहा है। वर्णाश्रम पर कुठाराघात हो रहा है। कुल ललनाओंकी प्रतिष्ठा निरापद नहीं है। शासक लोग अपने स्वार्थ और भोग लिप्साके लिए जनसाधारणके हितोंकी हत्या कर रहे हैं, फिर भी उस दीनानाथ भगवान्के दर्शन नहीं होते ?

यह हमारा ही दोष है। हम मनोयोग पूर्वक भगवान्के दर्शनका संकल्प नहीं करते। यदि हम सच्चे हृदयसे उस जगदीश्वरका स्मरण करें और पुकारें तो धनुर्द्धारी राम हमारे हृदय-मन्दिरमें बैठे मिलेंगे और हमारी सच्ची पुकार सुन, इस अवनी तल पर पुनः अवतीर्ण हो कर, गौ और साधुजनोंकी रक्षा एवं दुष्टोंका संहार कर निश्चय ही आधि-व्याधियोंसे पीड़ित और दरिद्रतासे दुःखित प्रजाकी रक्षा करेंगे।

आशा है हिन्दू जाति अपने महापुरुषोंके चरित्रोंके महत्त्वको समझती हुई उनकी जयन्तीको भक्ति श्रद्धापूर्वक मना कर कर्त्तव्य पालन करेगी। अन्तमें 'कबहुँक दीनदयालके भनक परेगी कान।'

हिन्दू-पर्व (त्यौहार)

(लेखक—विद्वद्वर श्री पं० हनुमान् शर्मा जी)

गङ्गादशमी

(१)

(१) भारतवर्षमें पुण्यप्रद पर्वों (या हिन्दू-त्यौहारों) की कमी नहीं है। यहाँ आठ वार नौ त्यौहार लगे ही रहते हैं। यह इस देशके ऋषि महर्षि या प्राचीनकाल के व्यवस्थापकोंकी व्यापक बुद्धिका प्रकाश या उनकी दूरदर्शिताका प्रभाव है।.......(२) किसी भी पर्व या त्यौहारके सम्पन्न करनेमें भक्ति और श्रद्धाके साथ हर्ष और उत्साह की योजना की जाती है और इस प्रकार करनेसे ही देशकी धार्मिक-सामाजिक-व्यावहारिक और व्यावसायिक परिस्थितिमें सुधार होता है।.......(३) 'गङ्गादशमी' धर्मप्राण हिन्दुओंका एक ऐसा ही महा-पुनीत पर्व है। इस दिन भगवती भागीरथीने 'विष्णु ❀ पादाब्ज' (स्वर्ग) से अवतरित होकर भूमण्डल पर पदार्पण किया था....(४) इसके लिए महाराज भागीरथके किये हुए जप-तप और प्रयत्नोंसे प्रसन्न होकर वह यहाँ आई और इसी कारण उसका "भागीरथी" नाम विख्यात हुआ।....(५) वह स्वर्गसे चली, पृथ्वी पर आई और पातालमें प्रविष्ट हुई इस कारण 'त्रिपथगा' कहलायी। और यह 'ब्रह्मद्रवा' (परब्रह्मसे निर्झर हुई) तो है ही।.... (६) विचारपूर्वक देखनेसे ज्ञात हो सकता है कि गंगाके जितने नाम हैं वे सब रहस्यपूर्ण और मननीय हैं। आगे उनका यथा प्रसंग संक्षिप्त परिचय दिया गया है।

(२)

(१) सगर राजाके भस्मीभूत साठहजार पुत्रोंको स्वर्ग प्राप्त कराने और पापाचार परायण प्राणियोंको पापमुक्त करनेके हेतुसे भागीरथने बहुत वर्षोंतक तप किया था और अनेक प्रकारके अन्य प्रयत्न भी किए थे।....(२) इस विषयमें पाश्चात्त्य पण्डितोंका यह

❀ विष्णु पादाब्ज संभूते गंगे ! त्रिपथगामिनी।
ब्रह्मद्रवीति विख्याता पापं मे हर जान्हवी ॥ (आन्हिकतत्त्व)

मत है कि भागीरथ बड़े बुद्धिमान् प्रजापालक और कलाकुशल इन्जिनियर थे। उन्होने हिमालयके स्कन्ध स्थानीय गंगोत्तरीके गव्हर-गर्तसे गंगाका सुश्रव किया था और हिमालयके पादप्रदेशसे गंगासागर पर्यन्त पन्द्रहसौ मील (या ७५० कोस) लम्बी नहर बनवाकर उसको यहाँ लाये थे। (३) जिस दिन गंगा-गंगोत्तरी से उतरकर नीचे आयीं उस दिन ज्येष्ठ *शुल्क दशमी मंगलवार था और गंगाके दर्शनार्थी अगणित मनुष्य हिमालयके अंगमें और हरिद्वारके अतिविस्तृत प्रांगणों में उपस्थित थे अतः (४) उस दिनसे अद्यावधि उसी तिथिमें यह पुनीतपर्व सम्पन्न होता हैं और हिमालय से लेकर गंगासागर (या कपिलमुनिके आश्रम) तक गंगातटवर्ती जितने भी नगर,ग्राम,बस्तियां या देश हैं उन सबोंमें मानाया जाता हैं। (५) इतना ही नहीं जो लोग असामर्थ्य या असुविधा वश गंगातटके निकट तक भी नहीं जा सकते हैं वे उसी पुण्यफलके प्राप्त होने की भावनासे घर-गांव या समीपके कुआ,बावली या तालाब आदि पर जा कर ही पर्वस्नान करते हैं। (६) और जलमें डुबकी लगाते या लोटाभर जलको शरीर पर उंडेलते समय— 'इमं मे गंगे' 'गङ्गा गंगेति' 'गंगे च यमुने' या 'गङ्गाजी-गङ्गाजी' आदि अभ्यस्त मंत्रोंका उच्चारण करके भगवती भागीरथीका स्मरण करते हैं। (७) पर्वस्नानके पुण्यफलकी उपलब्धिमें यह विशेषता है कि यदि उस दिन [१] ज्येष्ठमास [२] शुल्कपक्ष [३] दशमीतिथि [४] भौमवार [५] हस्तनक्षत्र [६] व्यतीपात और [७] आनन्दयोग [८] गरकरण [९] कन्याका चंद्रमा और [१०] वृषका सूर्य हो तो इन दश के योगमें किये हुए स्नान दानादिका फल दशगुणा होता हैं।‡

(३)

(१) यह पर्व 'दैवकार्य' है अतः इसमें पूर्वाह्व व्यापिनी दशमी ली जाती है। यदि वह दो दिन पूर्वाह्व व्यापिनी हो तो जिस दिनके पूर्वाह्व में उपरोक्त दशयोगोंमेंसे जितने अधिक मिलते हों उस दिनको लेना चाहिये। (२) स्मृतिकारोंका कथन है कि यदि उक्त दशयोगोंमें केवल दशमी भौम और हस्तका योग हो तो भी यह पर्व ३ प्रकारके 'कायिक'—४प्रकारके 'वाचिक' और ३प्रकारके 'मानसिक' पापों को दूर करता है। इसीलिए इसका नाम §'दशहरा' (दश पापोंको हरने वाला) हुआ है।....(३) गङ्गादशमी के निर्णयमें यह अवश्य स्मरण रहना चाहिये कि— *'अधिमासके अवसरमें जो कृष्णपक्षके व्रतोत्सव होते हैं उनको प्रथम मासके कृष्णमें और शुक्लपक्षके व्रतोत्सव होते हैं उनको दूसरे महीनेके शुल्कमें करते है।' किन्तु (४) गङ्गादशमीमें ऐसा नहीं करना चाहिये, यह शुल्कपक्षमें होती है तो भी प्रथममासके शुल्कमें ही करना चाहिये। अर्थात् दो जेठ हों तो पहले जेठकी शुक्लदशमी ही 'गङ्गादशमी' करना चाहिये। (५) योग विशेषके कारण गङ्गादशमीको 'दशहरा' कहते हैं। और एतन्निमित्तके स्नान, दानादिकी सामग्रीमें भी १०।१० वस्तु लेते हैं। यथा — आरम्भमें १० विधस्नान, तिल, गुड़, घी, सत्तू और जलकी १०-१० प्रसृल(पैसे) दानादिमें १०प्रस्थ तिल, १० प्रस्थ जौ और १० गाय और दानपात्र १० ब्राह्मण होते हैं।

(४)

(१) गंगा अत्यन्त प्राचीन पुण्यसलिला नदी है। पृथ्वीके सम्पूर्ण तीर्थोंमें यह सर्वोत्कृष्ट और प्रधान है। वेद, पुराण, धर्मशास्त्र, काव्य, कोश, इतिहास, ज्योतिष, व्याकरण और कर्मकाण्ड आदि सभी

---

*'दशम्यां शुल्कपक्षे तु ज्येष्ठेमासि कुजेऽहनि।
अवतीर्णा त्वतः स्वर्गाद्धस्तर्क्षे च सरिद्वरा॥' (स्मृतिसार)

‡ 'ज्येष्ठेमासि सितेपक्षे दशमी कुजहस्तयोः।
व्यतीपाते गरानंदे कन्याचंद्रे वृषे रवौ।
दशयोगे नरः स्नात्वा सर्व पापैः प्रमुच्यते॥' (स्कन्ध)

§ 'अदत्तानामुपादानं हिंसा चैवाविधानतः।
परदारोपसेवा च 'कायिकं' त्रिविधं स्मृतम्॥'
'पारुष्यमनृतं चैव पैशून्यं चापि सर्वशः।
असम्बद्ध प्रलापश्च 'वाङ्मयं' स्याच्चतुर्विधम्॥'
'परद्रव्येष्वभिध्यानं मनसानिष्टचिन्तनम्।
वितथाभि निवेशश्च 'मानसं' त्रिविधं स्मृतम्॥' (मनुस्मृति)

* 'दशहरा सुनोत्कर्षश्चतुर्ष्वपि युगादिषु।
उपाकर्म महालक्ष्म्योरेतदुक्तं वृषादितः॥ (हेमाद्रि)

शास्त्रोंमें इसका थोड़ा या बहुत वर्णन पाया जाता है। ....(२) 'ऋग्वेदादि' का मत है कि गंगाके निकटवर्ती तट पर निवास करने वाले अंतमें यदि इसी पुण्यसलिलाके सलिलमें लीन हो जाय तो वे चाहे जैसे मनुष्य या पशु-पक्षी और कीट-पतंग हों उनको स्वर्ग मिलता है। ....(३) भूमण्डलकी किसी भी नदीके तीर पर इतने तीर्थ नहीं जितने गंगाके तटवर्ती स्थानों पर हैं। इस कारण इसका मान और महत्त्व सर्वत्र व्याप्त हो रहा है। ....(४) हिमालय से चल कर जिस स्थानमें यह समुद्रमें मिलती है, उसका नाम 'गंगा-सागर' है। यह अत्यंत प्राचीन कालसे ही हिन्दुओंका अति पवित्र तीर्थ माना गया है। ....(५) इसके अतिरिक्त हरिद्वार, काशी, प्रयाग और सौरों आदि तीर्थस्थान भी इसी गंगाके अंग हैं जिनमें वैसे तो हजारों यात्री प्रतिदिन जाते ही हैं किन्तु गंगादशमी जैसे पुण्य-पर्व या व्रतोत्सवादि के अवसरोंमें अपार भीड़ होती है। .... (६) भूतत्त्व के जानने वालोंने अनुसंधान करके अनुमान किया है कि प्राचीन कालमें वर्तमान गंगासागर १५० कोश इधर उत्तरमें राजमहलके समीप था, अब वह इतना आगे चला गया। ....(७) इसका मुख्य कारण यह है कि गंगाके प्रवाहमें प्रतिवर्ष ६३६८०००० टन (या १७ अरब १६ करोड़ ३६ लाख मन) मृत्तिका जा कर समुद्रको पूरती है और इस प्रकार प्रतिवर्ष पूरनेसे वह अपने स्थानसे आगे बढ़ता रहता है। ....(८) यही कारण है कि वह राजमहलको पीछा छोड़ कर डेढ़ सौ कोश आगे कपिल मुनिके आश्रममें चला गया। यह गंगाके महत्त्वका ही प्रभाव है। (९) जिस समुद्रको सरिताओंका पति बतलाया है और जिसके सलिलमें अनेकों नदियां लीन होकर अपने विपुल वैभवको लुप्तप्राय कर देती हैं — उसी सागरको भगवती भागीरथी स्थानहीन करनेकी सामर्थ्य रखती है और उसके विस्तीर्ण वक्षस्थल को विदीर्ण कर पातालमें चली जाती है। अस्तु।

(५)

(१) हिमालयके जिस स्थानसे गंगा निर्गत होती है उसके समीपमें इसका विस्तार केवल १८ हाथ और गहराई १ हाथ है, किन्तु नीचे आते आते दूसरी नदियोंके सहयोगसे इसका आयतन विस्तीर्ण हो गया है। ....(२) प्रवाही स्थानोंमें उत्तर-पश्चिम से गंगा और उसके पीछे अलकनन्दा मिलती है। यहींसे देवप्रयागका प्रारम्भ होता है और इसके दक्षिण-पश्चिममें हरिद्वार है। ....(३) हरिद्वारसे देहरादून, शाहरामपुर, मुजफ्फरनगर और बुलंदशहर होती हुई फर्रुखाबाद पहुँचती है और यहां इसमें रामगंगा और मिल जाती है। इसके पीछे यह प्रयाग पहुँचती है। ....(४) हिमालयसे प्रयाग ३३४ कोश है। यहां इसमें यमुना मिलती है। यही संगम स्थान है। इसमें यह विशेषता है कि गंगाका सुश्वेत और यमुनाका सुनील जल जिस प्रकार पीछेसे पृथक् पृथक् आता है उसी प्रकार आगे भी अलग अलग हो जाता है। .... (५) यहां से आगे यह वाराणसीमें होती हुई बिहारमें पहुंच कर पहले शोण नदी और गण्डकीसे मिल कर कौशिकीमें गिरती है। ....(६) फिर राजमहल को देखती और गौड़ महानगरके भग्नावशेष अंगों को धोती हुई पूर्वाभिमुख हो जाती है। यहांसे आगे इसकी एक शाखा अलग होकर मुर्शिदाबाद, बहरामपुर, नदिया कालन, हुगली, चंदननगर और कलकत्ता होती हुई वंगोपसागरमें मिल जाती है। ....(७) अंग्रेज लोग इसके मूल प्रवाहको गंगा और कलकत्ता होकर गई उसको हुगली कहते हैं। ....(८) गंगाके मुहाना (अग्रभाग) से यमुना ४३०, घाघरा ३३०, गोमती २४१, शोण २३२, गण्डकी २२५, रामगंगा १८६॥, कोशी १६२, महानदी १२०, कर्मनाशा ७० और अलकनन्दा ४० कोश है।

(६)

(१) गंगाके अग्रभागसे चटगांव १३५ कोस है। इसके बीचमें (१) गंगा (२) मेघनाद (ब्रह्मपुत्र) (३) हरिणहार (४) पुष्कर (५) मुर्जाटा (कागना) (६) बड़पुंग (७) मलिजु (८) रायमंगल (यमुना) और (९) हुगली ये

नौ शाखा समुद्रमें जा कर मिलती हैं।.......(२) सागरसे मूलस्थान तक गंगाकी लम्बाई ७५४ और मेघनासे ८४० कोस है।.......(३) ग्रीष्म ऋतुमें गंगाका विस्तार कहीं पाव कोस, कहीं आध कोस औ कहीं एक कोस हो जाता है। और सम्पूर्ण आधिपत्य (या विस्तारका क्षेत्रफल) ३९११०० वर्गमील (या १९०५५० वर्ग कोस) हैं।.......(४) और वर्षाकालमें तो यह स्वाभाविक रूपसे ही बढ़ जाता हैं। ग्रीष्म और वर्षामें जो न्यूनाधिक्य होता हैं वह इस प्रकार हैं।..........

स्थान	वर्षा फुट	इञ्च	ग्रीष्म फुट	इञ्च
प्रयाग	४१	६	२६	०
काशी	४५	०	३४	०
कहलगांव	२६	६	२८	३
जैलंघी	२६	०	२५	६
कुमारखाली	२२	६	२२	०
कलकत्ता भाटा	७	०	६	७
ढाका	१४	०	०	०

(५) हरिद्वारमें गंगाकी चौड़ाई ७ हजार घनफुट, काशीमें १६००० घनफुट और राजमहलमें २ लाख ७ हजार घनफुट हैं, अर्थात् इतना जल निकलता हैं। किन्तु समुद्रमें ज्वार भाटा होनेके समय ज्वार (चढ़ाव) में १८ लाख घनफुट हो जाता है।....... (६) परीक्षासे ज्ञात हुआ हैं कि प्रयागसे काशी तक १५५ कोसमें प्रति कोस १ फुट पंसाल (पेंदा) नीचा हुआ हैं, उसके आगे कहलगांव तक प्रति कोस १० इञ्च, कहलसे हुगली तक ८ इञ्च, हुगलीसे कलकत्ता तक ८ इञ्च और कलकत्तासे सागर संगम तक २ से ४ इञ्च प्रति कोस नीचा हुआ हैं;.......(७) गंगासे बहकर गई हुई मिट्टीसे समुद्रके जो अंग दब गए थे उनमें २५० हाथ नीचे जल जन्तुओं के अस्थिपञ्जर और कोयले निकले थे। इससे ज्ञात होता हैं कि किसी जमानेमें कलकत्ता तक समुद्र था।

(७)

(१) भारतमें रेलका प्रचार होनेसे पहले तक भारत की व्यावसायिक सामग्री भारतीय जहाजों आदि के द्वारा आती जाती थी और बाहरके प्रत्येक द्वीपमें भारतीय अन्न वस्त्रादिकी भरमार लगी रहती थी.......(२) अब अंग्रेजोंके समयमें गंगासे कई एक नहरें निकाली गई हैं, उनमें सर्वप्रथम संवत् १८६४ में जो भयानक अकाल पड़ा और पानीका सर्वथा अभाव हो गया तब संवत् १८६६ में हरिद्वार के निकटसे नहर निकाली गई। वह हरिद्वारसे उत्तर गणेश घाटसे आरम्भ हुई और सहारनपुर, मुजफ्फर-नगर तथा फतहगढ़ तक गई और इसके आगे कई नगरोंमें होती हुई कानपुर तक चली गई.......(३) इसकी लम्बाई २२२॥ कोसकी है। और इसके तय्यार करनेमें २ करोड़ २४ लाख २५ हजार रुपये खर्च हुए थे। इस नहरको कटली साहब नामके इञ्जीनियरने तय्यार करवाया था। अतः उनके उत्साहको बढ़ाने की कामनासे तोप दागी गई।.......(४) गंगाकी दक्षिण नहर उपरोक्त नहरसे बड़ी है। वह नदादें स्थानमें काली नदी और एटा के पश्चिममें ईशास स्थान होकर गोपालपुर, कानपुर और जेरास्थानमें जाकर इटावासे मिल गई है।.......(५) इसके आगे शिकोहाबाद होकर दक्षिण पूर्वमें ईस्टइण्डिया रेलवे के साथ समानान्तरसे चलती हुई कानपुर जिलाके दक्षिण शिकन्दरा और भगिनीपुर होती हुई यमुना से मिल गई है।.......(६) बिहारमें भी शोण और गंगाके बीच कई एक नहरें हैं और कलकत्तासे पूर्व दिशामें भी एक नहर है। इस प्रकार गंगासे और उसकी नहरोंसे भूमण्डलका बहुत भाग आच्छादित है और व्यापार व्यवसायकी सामग्रीका यातायात खेती-बारीके द्वारा अन्नादि पदार्थोंकी उत्पत्ति और पुण्यप्रद स्नान दानादिकी सुविधा आदि अनेक प्रकार से संसारका उद्धार और उपकार हुआ है, होता हैं और आगे भी अनन्तकाल तक होता रहेगा। एवमस्तु।

(८)

(१) गंगा सामान्य नदी नहीं है — साक्षात् देवी है, और देवियोंमें भी विष्णुकी वामांगना है। देवीभागवतमें लिखा है कि गंगा, सरस्वती और लक्ष्मी ये तीनों विष्णुकी पत्नी हैं और तीनों ही भगवान्के समीप निवास करती हैं।.......(२) एक

बार ये तीनों विष्णुके समीप उपस्थित थीं, उस समय गंगाने विष्णुके बारम्बार दर्शन किए और इस प्रगाढ प्रेमसे विष्णु हंस दिए। यह देख कर सरस्वती नाराज हुई और गंगाको जल रूपमें प्रवाहित होनेका शाप दिया।.......(३) इस बुरे वर्तावसे लक्ष्मी नाराज हुई — और उसने सरस्वती को सरिता रूपमें परिणत कर दिया। यही कारण है कि इसमें स्नान दानादि करनेका अनन्त फल होता है।.......(४) 'ऋग्वेद'में लिखा है कि गंगा के जलमें स्नान करनेसे पापी और पुण्यात्मा कैसे भी मनुष्य हों उनको स्वर्ग मिलता है।.......(५) गंगामें बैठ कर स्नान दान पूजा पाठ और हवन करनेसे असीम फल होता है। (स्कंद पुराण) .... (६) गंगाके दर्शनोंसे ज्ञान, ऐश्वर्य, आयु, प्रतिष्ठा और सम्मान प्राप्त होता है।...... (७) और पराए द्रव्यका अपहरणता पर द्वेषादिमें परायण और गो ब्राह्मणादिकी हत्या करने वाले महापापी भी गंगा स्नानसे तर जाते हैं। (ब्रह्म पुराण) ...(८) गंगाकी रजको शरीरमें धारण करनेसे शरीर निष्कलंक और प्रकाशमान हो जाता है। (अग्नि पुराण)...... (९) अन्न सुवर्ण-गौ-और हाथी, घोड़े, तथा रथ आदिके देनेका जो फल है वह श्रद्धा सहित गंगा स्नान करनेसे होता है (स्मृत्यन्तर)....... (१०) कोई भी कुकर्मी या अभक्त गंगा स्नानको जाता है तब उसकी सदिच्छामें काम क्रोध और मद लोभ वाधा डालते हैं। (भविष्य).......(११) मनुष्य यदि मृत्युके समय अनायास गंगामें गिर जाय तो उसको भी मोक्ष प्राप्त होता है। शास्त्रोंके देखनेसे यहां तक ज्ञात होता है कि मृत मनुष्यके अस्थि (दांत-दाढ खोपरी, नख या केश आदि जो कुछ भी) गंगामें गिर जाय या गिरा दिया जाय तो उससे भी उसको स्वर्ग मिल जाता हैं। (कूर्मपुराण) ....(१२) भास्कराचार्यने लिखा है कि, गंगा स्नानकी कामना करके जो मनुष्य अपने घर या गांवसे निकलते हैं तब उनके परलोक गत पूर्वजोंमें उत्साहका उदय हो जाता है।.......(१३) जब वे गंगा पर पहुँच जाते हैं तब मृतप्राणि हर्षोन्मत्त हो जाते हैं और जब वह गंगामें स्नान कर लेते हैं तब उनके पूर्वज दिव्यदेह हो कर स्वर्गमें चले जाते हैं (सिद्धान्त शिरोमणि).........(१४) कवि सम्राट पण्डितराज जगन्नाथ त्रिशूलीने तो यहां तक सूचित किया है कि— प्रभात समयमें गंगा-जलमें प्रविष्ट हुई राणियोंके कुच तट पर लगी हुई कस्तूरीके गंगा जलमें घुल जाने मात्रसे भी जिन मृगोंकी नाभिसे वह कस्तूरी निकली थी उन मृगोंको भी स्वर्ग मिला था (गंगालहरी)

(६)

(१) ऐसी पतित पावनी—जगदुद्धारिणी भगवती भागीरथीका भूमण्डल पर कब तक विराजना होगा इस विषयमें विभिन्न मत मिलते हैं।.......(२) कुछ लोग 'कलेर्दश सहस्राणि विष्णुस्त्यजति मेदिनीम्। तदर्धं जाह्नवी तोयं तदर्धं ग्रामदेवता।' इस वाक्यके अनुसार कलियुगके ५ हजार वर्ष व्यतीत होने पर गंगा जलका न मिलना मानते हैं।.......(३) परन्तु वर्तमान संवत् २००२की गंगा दशमीके दिन उपरोक्त अवधिको व्यतीत हुए ४६ वर्ष गत हो गए, परन्तु हम और आप प्रत्यक्ष देख रहे हैं कि अभी गंगा या गंगा जल गया नहीं है।.......(४) इतना अवश्य हुआ हैं कि लोगोंकी गंगाके प्रति जो भक्ति या श्रद्धा ४६ वर्ष पहले थी वह अब बहुत कम हो गई और कई स्थानोंमें गंगाकी नहरें हो जानेसे गंगाके वास्तविक जलमें भी न्यूनता आ गई।.......(५) फिर भी वराहपुराणके 'पृथिवी गंगया हीना भविष्यत्यन्तिमे कलौ' इस वाक्यके अनुसार अन्तिम कलियुगमें पृथ्वी गंगासे हीन हो सकेगी। इसके पहले इसमें कोई हीनता नहीं आवेगी। इसके अतिरिक्त गंगाका उद्गम हिमालयके एक विशेषांगसे हुआ है और हिमालय सामान्य पर्वत नहीं, दैवीसम्पत्ति पूर्ण दिव्य देश है अतः जब तक वह भूमण्डल पर स्थित रहेगा तब तक गंगा भी रहेगी। अतः तब तक हम और आप अनेक बार अनेक योनियोंमें हो आवेंगे और भाग्य बलवान् रहा तो गंगा स्नान भी कर लेंगे

[१०]

(१) गंगाकी महत्ताके उदाहरण देखिए, एक बार सम्राट् अकबरके समयमें कविसम्राट् पंडितराज जगन्नाथ त्रिशूलीने यवन जातिकी नवयुवती 'लवंगी'को अपने आश्रयमें निवास दिया था। यह देख कर तत्कालीन धर्मसमाजने उनका बहिष्कार कर दिया। ....(२) तब पण्डितराजने गंगाकी शरण ली, वह उसके तट पर बैठ कर स्तवन करने लगे। रचना कुछ ऐसी आकर्षक थी कि पण्डितराज के मुखसे इधर तो एक एक पद्य निकलता गया और उधर गंगा अपने स्थानसे एक एक पद इनकी ओर आती गई। अन्तमें गङ्गालहरीके ५२ पद्य पूर्ण होते ही गंगामाताने अपने पवित्र पुत्रको गोदमें उठा लिया और अपने स्थानमें वापस चली गई। यह देखकर जाति वाले स्तब्ध होगये। (३) एकबार पार्वतीने शिवजी से पूछा कि जब गङ्गास्नानसे पापी तर जाते हैं तो फिर वे अब तक कम क्यों नहीं हुए ? तब शिवजीने कहा कि उनमें विश्वासकी हीनता है। यह कहकर.... (४) वे रोगी बन कर सो गए और सुन्दरस्वरूप पार्वती उनके पास बैठकर रोने लगी। पर्वका दिन था — गङ्गास्नानको अगणित यात्री आये थे। किसी भक्तने पार्वतीसे पूछा—आप क्यों रोतीहैं ? तब उत्तर दिया कि, "मेरे पतिदेव रुग्ण हो कर खड्डेमें गिर गए, कोई निष्पापी हो तो इनको बाहर निकाल दे। कदाचित् पापी होगा तो हाथ लगाते ही भस्म हो जायगा।" (५) यह असम्भव था कि सब ही सर्वथा निष्पाप हों और नहा कर आनेवालोंकी यह भूल थी कि वे गङ्गास्नान कर आये पीछे भी अपनेमें पापका अंश मानते रहें। इस भूलसे प्रायः किसी मनुष्यने भस्म हो जानेके भयसे रुग्ण शिवका करस्पर्श नहीं किया....(६) अन्तमें एक हृष्टपुष्ट जवानने गङ्गाकी महिमापर विश्वास करके सोते हुए शिवजीको उठा लिया और बाहर लाकर बिठा दिये। तब शिवजीने कहा कि हजारों यात्रियोंमें यही एक सच्चा भक्त है और यही निष्पाप है।....(७) अस्तु। इस गए गुजरे जमानेमें भी चोरी, अन्यायी और जीवहत्या आदिकी यथार्थता जाननेके लिए गङ्गाकी शपथसे पूछा जाता है और उसके झूठ साँचका पता लगा लिया जाता है।.... (८) रैगरजातिके चर्मकार गङ्गाको बहुत मानते हैं और गङ्गा भी उन पर कृपा रखती हैं। ये लोग सर्वस्व जाने पर भी गङ्गाकी शपथ नहीं खाते। फल यह होता है कि गङ्गास्नानके निमित्त जो गङ्गोदक (पूजा) की जातीहै उसमें गङ्गा उमंग आतीहै। दैवात् न उमंगे तो उनके जाति बांधव उस गङ्गोदकमें भोजन नहीं करते हैं। तन्निमित्तकी भोजन सामग्री निरर्थक हो जाती है।

(१०)

(१) **"गङ्गाकी स्वर्गीयता और सर्वोत्कृष्टता"**—का महान् आश्चर्यजनक कारण यह है कि पृथ्वी पर छोटी-बड़ी अनेक नदियां हैं और उनमें कई समुद्रोपम भी हैं। परन्तु सर्वापेक्षा गङ्गाके मान्य और महत्त्वको शास्त्र और संसार दोनों अधिक मानते हैं इसी प्रकार अन्यकी अपेक्षा इसके जलकी प्रतिष्ठा भी अतःपर की जाती है। (२) अतः यह प्रश्न स्वतः हो सकता है कि इस नदीमें ऐसी कौनसी सर्वोत्कृष्टता है जिसके कारण सारा संसार और सम्पूर्णशास्त्र इसका इतना अधिक आदर करते हैं। इसका एकमात्र उत्तर यह हो सकता है कि गङ्गा देववंद्य और साक्षात् देवी है। और इसका जल भी अवश्य ही स्वर्गसे आता है। यही इसकी सर्वोत्कृष्टता है।....(३) विज्ञान-वेत्ता इस बातको मानते और जानते भी हैं कि ग्रीष्मऋतुमें समुद्रका सक्षार जल सूर्यकी किरणोंसे आकर्षित होकर भाफरूपसे आकाश में जाताहै और वर्षाऋतुमें फिर वही सुमिष्ट जलरूपसे पृथ्वी पर आ जाता है। (४) इसमें सन्देह नहीं कि पृथ्वी पर पड़े हुए मैल,गन्ध और क्षार आदिको लेकर लगभग पाँचसौ नदियां समुद्रमें गिरती हैं और वही जल सूर्यकी प्रखर किरणोंसे संतप्त हो कर भाफ बन जाता है। (५) अतः नदियों द्वारा (पृथ्वी परसे) लाया हुआ समुद्रीय जल जब तक आकाशमें रहता है तब तक शुद्ध रहता है। और पृथ्वी पर पड़ते ही फिर वह तत्त्वमें तत्त्व मिल जानेसे विकृत हो जाता है। (६) परन्तु गङ्गाजल इस प्रकार यहाँसे जाता आता नहीं है। इसके लिए भगवानने वैकुण्ठमें एक अलग विधान बना रक्खा है। ज्योतिर्विद् इस बातको

जानते हैं कि आकाशमें ध्रुवके समीप सप्तर्षिमण्डल है, वह ध्रुवकी अहोरात्र परिक्रमा किया करता है।....(७) उस मण्डलके समीपमें दैवी जलपूर्ण एक तारापुञ्ज है जिसपर सूर्यकी किरणें पड़ती हैं और उनके तेजसे तारा पुञ्जका जल सुश्रव होकर हिमालयके गौरी-शङ्कर शिखरपर पड़कर बहुत दूरकी गङ्गोत्तरीके गव्हरगर्त्तमें भर जाता है।..... (८) यह लिखनेकी आवश्यकता नहीं कि हिमालय 'दिव्य देश' है और हिमका आलय तो है ही। अत: उस पर गिरा हुआ स्वर्गीय सप्तर्षिमण्डलका 'विष्णु पादाब्ज संभूत' जल विकृत नहीं होता — भूमण्डलके भूम्यंग पर गिर जाने पर भी यथावत् बना रहता है।........(९) वही शुद्ध गङ्गा जल है और इसी कारण वह चाहे हरिद्वारका हो, प्रयागका हो और चाहे मणिकर्णिका घाटका हो — सदैव अविकृत रहता है। इसी महान्ताको द्योतित रखनेके लिए पूर्वाचार्यों ने 'मकर प्रयागे' आदिकी योजना की है। प्रसंगवश यहां पर्वादिके अवसरोंमें होने वाले गङ्गा स्नानके दृश्योंका दिग्दर्शन करा देना आवश्यक प्रतीत होता है।

(११)

(१) "हरिद्वार" की हरिकी पैड़ीका स्थान इस बार बिलकुल बदल गया है। उसमें यथा क्रम उतरती हुई लम्बी चौड़ी सुन्दर सीढ़ियोंका बहुत बड़ा घाट बन गया है।..(२) उसके सामने गंगाका आयतन और परली तरी मेलेके निमित्तसे बनाये हुए गंगा नगरके दर्शन होते हैं। उसमें जानेके लिए पुरानी नावों की पुलें बना दी गई हैं।........(३) नव निर्मित नगर क्या है, प्रत्येक प्रकारके व्यापारकी वस्तुओंके मिलनेका व्यापक मार्केट (बाजार) है। उसमें खाने पीने पहनने आदि सभी प्रकारका सामान दिन दूने और रात चौगुने दामों पर मिलता है।........(४) ज्यों-ज्यों यात्री बढ़ते जाते हैं त्यों ही मूल्य चढ़ता जाता है और स्थान सामान-आवागमन तथा यात्राकी सुविधा आदि कम होती जा रही है।........(५) आज पर्वस्नान है। आधी रातके पीछेसे ही हरिकी पैड़ीके सामने अगणित यात्री यथेच्छ स्थानमें स्वच्छन्दताके साथ बड़ी सुविधासे स्नान दान जप ध्यान श्राद्ध तर्पण क्षौर कर्म और भोजन तथा भजन कर रहे हैं। (६ बड़ी भारी सुहावनी चहल पहलका सर्वत्र साम्राज्य हो रहा है। और लठधारी गंगागुरु भी अपने यजमानोंसे दान दक्षिणा ले कर उनका नाम लिखते और जय मनाते हैं।........(७) संध्या आरती का समय हो गया है, उसमें सहयोग देने या उसे देखनेके लिए घाटकी सीढियों पर और सामनेके प्लेटफार्म पर उत्कण्ठाके साथ दर्शन करने वाले स्त्री पुरुषोंकी अपार भीड़ हो रही है और भगवती भागीरथीकी प्रकाशमान आरतीके दर्शन कर रही है। उस समयकी तल्लीनता अवर्णनीय हैं। ....(८) इसके अतिरिक्त अनेक देशोंसे आए हुए साधु-सन्यासी सन्त महन्त और जटाजूटधारी महात्माओंके यत्रतत्र स्थ आश्रम भी अकथनीय शोभासे सम्पन्न हैं और (९) आरतीकी प्रज्वलित बत्तियोंके अगणित दीपोंसे गंगाका अति विस्तृत आयतन भी उसी प्रकार प्रकाशित हो रहा है जिस प्रकार गगन मण्डलमें तारागण प्रकाशित है।

(२) "प्रयाग" यह पतितपावनी भागीरथीका दूसरा स्थान-विश्राम या आश्रम है। आज इसमें 'मकरप्रयाग' के पुण्य फलको प्राप्त करनेके लिए स्थानीय और बाहरके हजारों ही नहीं, लाखों यात्री आये हैं।..... ..(२) उनमें अधिकांश मनुष्य तो कई दिन पहले हीसे पैदल चलकर ऊंट बैल या घोड़ा गाड़ी आदिमें बैठ कर अथवा रेलकी फर्स्ट-सेकण्ड और थर्ड ही नहीं माल गाड़ियोंमें पशुओंके समान ठसाठस भर कर भी खड़े खड़े आए हैं।........(३) अकबरी किलाके दक्षिणी पार्श्वमें त्रिवेणीके संगम पर स्नान करनेकी कामना वाले नावोंमें बैठकर पानीमें तैर कर या जानु पर्यन्त पहुँचे हुए जलमें डुबकी लगा कर 'मकरार्क प्रविष्ट'का असीम फल प्राप्त कर रहे हैं। (४) हरिद्वारके समान यहां भी संतोंकी धूनी – साधुओंके अखाड़े — महन्तोंके डेरे नागोंकी जमात और हाथी बन्धोंके तंबू तने हुए हैं, और वे विविध प्रकार के गायन बादन संकीर्तन और कथा-

वार्त्ता या उपदेश दान करते हैं। (५) आए हुए यात्रियोंके जान-मालकी रक्षा खान पानादिकी सुविधा और भूले भटके आदिको यथा स्थान पहुँचानेकी सुविधा आदिके प्रबन्ध सरकारकी ओरसे हैं ही। अतएव अब विश्वनाथपुरीके दर्शन और कर लीजिये।

(१३)

"मणिकर्णिका" (काशी) में आज ईश्वरीय लीला पूर्णतया प्रकाशित हो रही है। निर्मल प्रभातकी पूर्व दिशामें से बाल सूर्यकी कोमल किरणें तरण-तारिणी--पाप--हारिणी--अधमोद्धारिणी भागीरथीके लम्बे विस्तार वाले तटको प्रकाशित कर रही हैं। अनेक राजा महाराजा सद्‌गृहस्थ और प्रतापी पुरुषों के अपार व्ययसे बने हुए श्री गंगाजीके सुन्दर और सुदृढ़ घाटों पर विचित्र प्रकारके वस्त्रालंकारोंसे सजे हुए स्त्री पुरुष उपस्थित हो रहे हैं। स्थान स्थानमें विद्वान् ब्राह्मणों द्वारा उच्चारण किये हुए संकल्प गूंज रहे हैं। किसी स्थानमें गंगातट पर बैठे हुए ब्राह्मण लोग वेदके मन्त्रोंका मधुर और कर्णपावन पाठ कर रहे हैं। श्रद्धालु और धर्म निष्ठ मनुष्य विधि पूर्वक स्नान दानादि करके एकाग्र मनसे जप-तप और ईश्वर स्तवनमें तल्लीन हो रहे हैं और अधिकांश-स्नानार्थी घाटकी पैडियों पर जय गंगे! हर गंगे! पापहारिणी! भवसागर तारिणी! अधमोद्धारिणी और जय जाह्नवी आदिका सहर्ष उच्चघोष कर रहे हैं। एक ओर बड़े चौड़े पाटमें गम्भीर भावसे बहती हुई श्रीगंगाजीके निर्मल और पावन जल पर छोटी और बड़ी अनेक नौकायें इधरसे उधर आ जा रही हैं और उनमें बैठे हुए मनुष्य गंगाजीके प्रत्येक घाटकी अलौकिक लीलाको आनन्दके साथ निहार रहे हैं। साथ ही प्रत्येक घाटके किनारे पर उत्तम जातिके पत्थरोंसे शिल्प--कलाकुशल कारीगरोंके बनाये हुए गगनस्पर्शी सुन्दर भवन शोभा दे रहे हैं। उनमें सूर्यबिम्बके समान प्रकाशित सुवर्ण-शिखरों वाले अनेक शिवमन्दिर तथा अन्यान्य अगणित देवमन्दिर भी हैं, जो जय शंभो! हर शंभो! जय पार्वतीपते! आदि परम पवित्र शब्दोंसे तथा शंखध्वनि और विजयघंट आदिके नादसे स्थानीय स्थल प्रतिध्वनित हो रहे हैं। अस्तु। गंगा किनारे इस प्रकारके स्वर्गोपम दृश्य अनेक नगरों, गांवों, बस्तियों घाट-बाट चतुराहों या गंगा भक्तोंके घरोंमें सर्वत्र ही देखनेमें आते हैं और उनसे गंगाका अमित प्रभाव सर्वांशमें आभासित होता है।

(२२) स्नानदान पूजा और प्रयोग विधि—

मनुष्यको गंगास्नान करनेका सौभाग्य किसी पूर्व पुण्यके प्रतापसे प्राप्त होता है। यात्रीको चाहिये कि वह घरसे सपरिवार या एकाकी (जैसा विचार हो) प्रस्थान करके गंगाके तटवर्ती जलमें पूर्वाभि-मुख उपस्थित हो कर "मम सकल पापतापप्रशमन पूर्वक सुस्थिरशान्तिप्राप्तिकामनया श्रीगंगास्नानमहं करोमि" यह संकल्प करके चोटी खोल कर आचमन करे और शीर्षादि पाद पर्यन्त सर्वांग स्नान करे। जलके भीतर थूक रींट या कुल्ले आदि न करे। फिर समीपकी भूमिमें कुशादिके आसन पर पूर्वाभि-मुख बैठे और नित्यकर्मादि करनेके अनन्तर गंगा जी का यथालब्ध गंधपुष्पादिसे पूजन करके अन्न, धन, भोजन-वस्त्र गौ-भू और हिरण्यादिका यथा सामर्थ्य दान करके सानन्द घर जाय। दानके❀ विषयमें शास्त्रोंकी यह आज्ञा है कि सर्वप्रथम दशविध स्नान करके काले तिल, गौका घी, सत्तू-गुड़ और जल ये १०-१० प्रसृति (पैसे अर्थात् एक हाथकी अंजलीमें आवै उतने) और १० फल इन सबको गंधपुष्पादिसे अर्चित करके यथा विभाग १० ब्राह्मणोंको दे। इसके सिवा सोना या चांदीकी गंगाकी मूर्ति बनवावे— यदि यह सामर्थ्य न हो तो चित्र स्थापन करे और

❀—'स्नात्वा भक्त्या तु जान्हव्यां दशकृत्वोविधानतः। दशप्रसृति कृष्णांश्च तिलांसर्पिश्च वै जले। सक्तु पिण्डा-न्गुडपिण्डान् दद्याच्च दशसंख्यया ततो गंगातटे रम्ये हेम्नां रूपेण वा तथा। अथ तत्राप्यशक्तश्चेल्लिखेत्पिष्ठेन वै भुवि।' नारायणं महेशं च ब्रह्माणं भास्करं तथा। भागीरथं च नृपतिं हिमवांश्च प्रपूजयेत्। (काशीखण्ड)

वह भी न हो तो आटेकी मूर्ति निर्माण करके साथमें सोना चांदी या आटेके मत्स्य-कच्छप-मण्डूक और मकरादि जल जीव निर्माण करके, पहले तो गंगा जीकी मूर्तिका और नारायण महेश्वर ब्रह्मा भास्कर और हिमालयका यथाक्रम पूजन करे और फिर जल जन्तुओंका पूजन करके उनका गंगामें प्रवाह करवा दे। सामर्थ्य हो तो ब्राह्मणादि गंगागुरुओंको भी दान मान और भोजन दे। तत्पश्चात् घर आकर गंगाजीका १ बार फिर पूजन करके यात्रासे लाए हुए जल-फल कण्ठी और प्रसाद आदिको वितरण करनेके अनन्तर जातिबांधवादिके सहित भोजन करे। इस प्रकार गंगायात्राको सामर्थ्यके अनुसार सर्वांग सम्पन्न करनेके अनन्तर यदि बन सके तो नित्य प्रति और न बने तो वर्ष भरमें एक बार 'गङ्गा-दशमी' के दिन प्रति वर्ष यथाविधि पूजन करे।

(२५) प्रयोग विधि—गंगादशमीदिने प्रातरुत्थाय गंगासंलग्न मनसा हरिंस्मृत्वा स्नानादिनित्यकर्मसमाप्य मृण्मयादिनिर्मिते रक्तवस्त्राच्छादिते पीठे (भद्र पीठे वा) सुवर्णरजतताम्रनिर्मितं मृण्मयनिर्मितं वा कलशं विधिवत्संस्थाप्य तदुपरि सुवर्णमयी गंगामूर्तिं (स्वर्णादिपात्रे लिखितमूर्तिं वा) स्थापयेत्। तत्समीपे (उत्तरदिग्भागे) नारायणं महेशं ब्रह्माणं भास्करं हिमवन्तं च संस्थाप्य। ततस्तेषां समीपे शुभासने पूर्वाभिमुखः स्वयमुपविश्य। आचम्यप्राणानायम्य सुमुखश्चेतिपठित्वा देशकालौ संकीर्त्य। मम कायिकवाचिकमानसिकसकलपातकोपपातकप्रशमन पूर्वक श्रुतिस्मृतिपुराणोक्त फलप्राप्तिकामनया गंगादशमीदिने (अन्यदिने वा) श्रीगंगादेवी पूजनमहं करिष्ये। तत्रादौ निर्विघ्नतार्थं गणपतिपूजनं च करिष्ये। गणानांत्वेति गणपतिं संपूज्य 'वक्रतुण्डाय इति मंत्रपुष्पाञ्जलिं दत्वा। ततः—

'सितमकरनिषण्णां शुभ्रवर्णांत्रिनेत्रां
करधृतकलशोद्यत्सोत्पलाभीत्यभीष्टाम्।
विधिहरिहररूपां सेन्दुकोटीरजूटां
कलितसितदुकूलां जान्हवीं तां नमामि॥'

इतिध्यात्वा* । करांजलिमध्ये गन्धाक्षतपुष्पाण्यादाय—"ॐनमो भगवति ऐं ह्रीं श्रीं हिलि हिलि मिलि मिलि गंगे मां पावय पावय स्वाहा" इतिमंत्रेण मन्त्रपुष्पाञ्जलीं श्रीगंगायै निवेदयेत्। ततः'ॐनमःशिवायै नारायण्यै दशपापहरायै गंगायै स्वाहा' इति मंत्रेण (अथवा 'श्रीगंगायै नमः' इति नाममंत्रेण यथालब्धोपचारैः सम्पूज्य तद्यथा। श्रीगंगायै नमः आवाहनं समर्पयामि, आसनार्थं अक्षताणि समर्पयामि, पाद्यं अर्घ्यं आचमनीयं स्नानं समर्पयामि। वस्त्रं समर्पयामि, 'गन्ध द्वारां दुराधर्षां नित्यपुष्टां करीषिणीं। ईश्वरीं सर्वभूतानां तामिहोपव्हयेश्रियं'इत्यनेन गन्धं समर्पयामि। अक्षताणि समर्पयामि। 'देवोद्यानसमुद्भूता न्यम्लानाति विशेषतः। मया हृतानि पुष्पाणि पूजार्थं प्रतिगृह्यताम्।' इति पुष्पाणि समर्पयामि। 'दशांग-गुग्गुलं धूपं सुगन्धं च मनोहरम्। गंगे देवि नमस्तेस्तु-गृहाण वरदा भव।' इति धूपं आघ्रापयामि। 'गृहाण मंगलं दीपं घृतवर्त्तिसमन्वितम्। रुद्ररूपे नमस्तेस्तु गृहाण वरदा भव।' इति दीपं दर्शयामि। 'शर्करा खण्डखाद्यानि दधिक्षीरघृतानि च। आहारं भक्ष्यभोज्यं च नैवेद्यं प्रतिगृह्यताम्।' इति नैवेद्यं निवेदयामि। आचमनीयं (फलं तांबूलं) दक्षिणां प्रदक्षिणाश्च समर्पयामि। ततः भद्रपीठस्थित गङ्गासमीपे नारायणं ब्रह्माणं महेश्वरं भास्करं भागीरथं हिमवन्तं च सम्पूज्य सुवर्णादि निर्मितान् पिष्टविनिर्मितान् वा मत्स्यकूर्ममण्डूकमकरादीन् जलजन्तूनपिगन्धादिभिः सम्पूज्यजले निक्षपेत्। ततः दशदशप्रमितान्तिलयवान् दशगाश्च गन्धादिभिः सम्पूज्य देशकालौसंकीर्त्य संकल्पं कुर्यात् 'मम सकलपापतापत्रय प्रशमनपूर्वक

*'चतुर्भुजां त्रिनेत्रां च सर्वावयवशोभिताम्। रत्नकुम्भ सितांभोज वरदाभयसत्कराम्। श्वेतवस्त्रपरीधानां मुक्तामणिविभूषिताम्। एवं ध्यायेत्सुसौम्याञ्च चन्द्रायुतसमप्रभाम्। चामरैर्वीज्यमानाञ्च श्वेतच्छत्रोपशोभिताम्। सुप्रसन्नां च वरदां करुणार्द्रनिरंतराम्। सुधाप्लावित भूपृष्ठां दिव्यमाल्यानुलेपनाम्। त्रैलोक्यनमितां गंगां सर्वैर्देवैरधिष्ठिताम्। दिव्यरत्नविभूषाढ्यां दिव्यमाल्योपशोभितामितिध्यात्वा।' (पूजासमुच्चय)

सकलाद्भुतशान्तिउपलब्धिकामनया दशप्रस्थतिलान् दशप्रस्थयवान् दशगाश्च दशसंख्याकेभ्यः ब्राह्मणेभ्यः दशधाविभज्य दातुमहमुत्सृजे ।' एवं दद्यात् ततः दशफलानि दशप्रसृति तिलसर्पिसक्तुगुड़पिण्डान् गन्धादिपूजितान् जले निक्षिप्य । नीराजनंकुर्यात् ततः पुष्पाक्षतान् गृहीत्वा । ॐयज्ञेन यज्ञमयजन्तदेवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन् । तेहनाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः ।' इत्यनेन पुष्पाञ्जलिं दत्वा । प्रार्थयेत् 'आदावादि पितामहस्य नियम व्यापार पात्रे जलं पश्चात्पन्नगशायिनो भगवतः पादोदकं पावनम् ।। भूयश्शम्भुजटाविभूषणमणेर्जन्होर्महर्षेरियं कन्या कल्मषनाशिनी भगवती भागीरथी दृश्यते ।' 'विष्णुपादाब्जसम्भूते गंगे ! त्रिपथगामिनी । ब्रह्मद्रवीति विख्याता पापं मे हर जान्हवी ।' इति सम्प्रार्थ्य । ततो घृतवर्ति समन्वितान् दशदीपान् प्रज्वाल्य गंधादिभिः सम्पूज्य 'श्रीगंगायै नमः' इत्युच्चार्य जले प्रवाहयेत् । ततः मूल मंत्रस्य दश सहस्र जपं कृत्वा दशब्राह्मणान् भोजयेत् । इति गंगापूजनम् ॥

सर्वोत्तम-धर्म

(श्री पं० बलजिन्नाथ जी शास्त्री बी० ए०)

अमेरिकामें एक बार समस्त धर्मवादियोंका एक बृहत् सम्मेलन हुआ, जिसमें स्वामी विवेकानन्द जी भी सम्मिलित हुए थे । वहाँ उन्होंने हिन्दू-धर्म के महत्त्वको संसारके सामने रखा था । तबसे संसार हिन्दू-धर्मको एक बड़ा धर्म मानने लगा । परन्तु हिन्दुओंके पास अपना राज्य नहीं । इस कारण हिन्दू-धर्मके महत्त्वका प्रचार संसारमें न हो सका । एक दो महात्माओंके उपदेशों द्वारा हिन्दू-धर्मका उपदेश कितने व्यक्तियोंके कानों तक पहुँच सकता ? इस कारण हिन्दू-धर्मके वास्तविक स्वरूपको न समझ कर सभी अपने अपने ही धर्मको सबसे बड़ा धर्म मानते हैं । 'श्रीस्वाध्याय' के एक पिछले अङ्कमें हमने "धर्मका मर्म" शीर्षक एक लेख दिया था । उसके पढ़नेसे पाठकों को यह ज्ञात होगा कि 'अभ्युदय' और 'निःश्रेयस' ये दोनों धर्मके मर्म हैं । अतः जो धर्म सर्वोत्तम रीतिसे अभ्युदय और निःश्रेयसका मार्ग बता सके वह ही धर्म सर्वोत्तम धर्म माना जाना चाहिए । अनार्य अर्थात् सुमेरियन धर्म (यहूदी, मुसलमान और ईसाई) तो अभ्युदय तक ही सीमित हैं। अतः वे कभी भी सर्वोत्तम धर्म कहे नहीं जा सकते । आर्य धर्मोंमेंसे पारसियोंके धर्मग्रन्थोंका प्रायः लोप हो गया है और मुसलमानोंके उदयके अनन्तर इस धर्मकी विशेष कोई वृद्धि नहीं हुई । इस कारण वह धर्म सर्वाङ्ग सम्पूर्ण न बन सका । बौद्ध-धर्ममें अभ्युदयकी अवहेलना ही रही अतः वह भी अङ्ग विकल ही रहा । महायान आचार्योंने यद्यपि इस धर्ममें अनेक परिवर्तन भी किए तो भी यह धर्म हिन्दूधर्म जैसा सर्वाङ्ग पूर्ण न बन सका । और यदि इस धर्म में तथा पारसियोंके धर्ममें नए नए परिवर्तन करके अंगविकलता दूरकी जाए तो इन दोनों धर्मोंका रूपान्तर आधुनिक हिन्दू-धर्मसे बहुत ही थोड़ा भिन्न होगा । वस्तुतः सूक्ष्म दृष्टिसे देखा जाए तो ये दोनों धर्म हिन्दू-धर्मके शाखा मात्र ही हैं । अतः इनमें जो महत्त्व है वह हिन्दू-धर्ममें पहले ही से विद्यमान है। मंगोल जातियोंमें बौद्ध-धर्मके अतिरिक्त एक और धर्म प्रचलित है, जिसे कान्फ्यूशनिस्ट धर्म कहते हैं। इस धर्ममें भी अनेक महत्त्व हैं, परन्तु यह धर्म सुमेरिय धर्मोंकी न्याईं अध्यात्मविद्यामें निर्बल है, अतः अभ्युदय निःश्रेयसकी सिद्धिमें हिन्दू-धर्मकी समानता नहीं कर सकता । अन्य छोटे छोटे धर्म

जैन, सिख, रेडइण्डियन आदि या तो हिन्दू-धर्मकी शाखा मात्र हैं, या इतनी छोटी कक्षाके हैं कि संसार के बड़े धर्मोंमें गिने ही नहीं जाते। इस प्रकारसे अभ्युदय और निःश्रेयसकी दृष्टिसे हिन्दू-धर्म ही सर्वश्रेष्ठ धर्म है।

सर्वश्रेष्ठधर्ममें दूसरा गुण यह होना चाहिए कि वह प्रत्येक प्रकृतिके मनुष्यको ग्राह्य होना चाहिए। संसारमें प्रायः चार प्रकारकी प्रकृतिके लोग होते हैं। (१) एक तो वे कि जो सोचते कम हैं। जिन्हें केवल कुल-परम्परागत रीतिका ही अनुसरण करना अभीष्ट होता है। ऐसे पुरुषोंके लिए हिन्दू-धर्म ही सर्वश्रेष्ठ है। क्योंकि हिन्दुओंकी श्राद्ध, पूजा, सन्ध्या, पाठ, जप आदि कुलपरम्परागत धार्मिक रीतियां ऐसी हैं कि जो जड़ बुद्धि वाले लोगोंको ग्राह्य हो सकती हैं और साथ साथ ही सन्ध्या, जप, यज्ञ आदि द्वारा उनको शारीरिक और मानसिक अभ्युदय दे देती हैं, और जप तथा पूजा द्वारा मनकी एकाग्रताका भी अभ्यास करा कर निःश्रेयसकी सिद्धिके लिए भी मार्ग तैयार करती रहती हैं। इन रीतियोंकी प्रक्रिया और नियम सभी वैज्ञानिक आधारों पर बनाए गए हैं और चाहे इनके अनुष्ठान करने वालेको उस वैज्ञानिक रहस्यका ज्ञान न भी होता हो फिर भी लाभ तो उसे अवश्य होगा ही। अज्ञान पूर्वक खाया हुआ औषध भी तो रोगको नष्ट कर ही देता है। (२) दूसरे प्रकारकी प्रकृतिके लोग होते हैं रसिक और प्रेमी लोग। इनको सुन्दर सुन्दर पुराणोंकी अपेक्षा होती है। इस प्रकृतिके लोगोंको भी हिन्दू-धर्म पूर्णतया सन्तुष्ट कर सकता है। क्योंकि भागवत जैसे सरस और हृदयग्राही पुराण और किसी धर्म के पास नहीं। ये पुराण भी सरस होते हुए ही साथ साथ दार्शनिक उपदेश करते रहते हैं। और इस प्रकारसे निःश्रेयसकी ओर ले चलते हैं। (३) तीसरी प्रकृतिके लोग होते हैं तार्किक; उनके लिए भी हिन्दुओं के धर्मग्रन्थोंमें न्याय और वैशेषिकदर्शन जैसे बहुमूल्य रत्न हैं। ये तर्क-प्रधान-ग्रन्थ तार्किकोंके हृदयको शीघ्र खींच लेते हैं। तर्कको समझाते हुए साथ २ ये ग्रन्थ अध्यात्म-विद्याका भी उपदेश करते जाते हैं। इस प्रकारसे तार्किक लोग हिन्दू-धर्मका आश्रय ले कर तर्क द्वारा अभ्युदय और निःश्रेयसको भी सुखपूर्वक पा सकते हैं। (४) चौथी प्रकृति के पुरुष होते हैं दार्शनिक। इनके लिए तो अनार्य धर्मोंमें कोई स्थान ही नहीं। पारसियोंके धर्ममें थोड़ा सा दर्शन विद्या का प्रतिबिम्ब सा दिखाई पड़ता है। बौद्ध और जैनधर्ममें दर्शन विद्या पर्याप्त मात्रा में मिलती है। परन्तु उससे भी अधिक पूर्ण विकास को प्राप्त हुई दर्शन विद्या हिन्दुओं ही के पास है। अतः दार्शनिक प्रकृतिके मनुष्योंके लिए भी सर्वोत्तम धर्म हिन्दू-धर्म ही हो सकता है। इससे यह सिद्ध हुआ कि चाहे मनुष्य किसी भी प्रकारका हो वह हिन्दू धर्ममें कभी निराश नहीं हो सकता। प्रत्येक मनुष्यको उसकी रुचिके अनुसार मार्ग बताकर हिन्दू-धर्म उसे पूर्णतया सन्तुष्ट कर सकता है। अन्य धर्मोंमें यह गुण नहीं। इस गुणके अभाव ही के कारण अन्य धर्मोंमें सभी मनुष्य उन्नति कर नहीं सकते।

आधुनिक वैज्ञानिक युगमें तो अन्धश्रद्धाके लिए कोई स्थान ही नहीं। आजकलकी बुद्धि उस धर्मका ग्रहण कर सकती है जो युक्तियों द्वारा उपपन्न हो सके। अनार्यधर्म तो कोई भी तर्ककी युक्तियों का सामना कर नहीं सकता। तर्ककी युक्तियोंकी शक्ति केवल आर्यधर्मोंमें ही है और उनमें भी सब से अधिक हिन्दू-धर्ममें ही है। अतः इस दृष्टिसे भी हिन्दू-धर्म ही सर्वश्रेष्ठ माना जा सकता है। हिन्दू-धर्मका दृष्टिकोण विशाल है, संकुचित नहीं। अन्य धर्मोंको किसी एक-एक व्यक्तिने चलाया। उन व्यक्तियोंके उपदेश उसी काल और उसी परिस्थिति में हितकर और हृदयग्राही हो सकते थे, सब कालों सब देशों और सब परिस्थितियोंमें नहीं। हिन्दू-धर्म इससे सर्वथा विपरीत है। यह किसी एक व्यक्तिने नहीं चलाया। यह तो एक विज्ञान है। अतिप्राचीन कालसे आजतक बुद्धिमान् लोग इस धर्मविज्ञानमें गवेषणा करते आए हैं और कर भी रहे हैं। इस कारण इस धर्मका दृष्टिकोण सदासे ही बड़ा विशाल रहा है। अतः यह धर्म प्रत्येक देश, काल और परि-

स्थितिमें हृदयग्राही, रुचिकर और हितप्रद बन सकता है। संकुचित दृष्टिकोण ही के कारण अनार्य धर्मावलम्बी निःश्रेयस के क्षेत्रमें उन्नति न कर सके। और यदि कोई अपने प्राक्तन संस्कारों या तीक्ष्ण बुद्धिके कारण उन्नति कर भी गया तो उसे महात्मा मनसूर और ईसाकी भांति सूली पर चढ़ाया गया। यह सारा संकोचका ही दोष है।

इस समय साम्यवाद सब धर्मोंके विरुद्ध खड़ा हो गया है। संकुचित दृष्टि वाले धर्म इसके सामने कभी ठहर नहीं सकते, इसके सामने यदि ठहर सकेगा तो हिन्दू-धर्म अथवा बौद्ध-धर्म। क्योंकि इन धर्मोंकी दृष्टि विशाल है; विशेष करके हिन्दू-धर्म एक विज्ञान रूपी होनेके कारण नवीन गवेषणाओं द्वारा साम्यवादके साथ इस प्रकार अपने आपको जोड़ सकता है कि साम्यवाद और हिन्दू-धर्म दोनों एक दूसरे के पोषक बनकर बलशाली बन सकेंगे। परन्तु हिन्दू धर्मके अनुयायियोंको बहुत गवेषणा और प्रयत्नपूर्वक अपनेको परिवर्तित करना होगा। इस वैज्ञानिक उन्नतिके आरम्भसे लेकर अभीतक हिन्दू परतन्त्रतामें रहे। यदि इस वैज्ञानिक युगमें हिन्दू स्वतन्त्र होते तो इस समय हिन्दू-धर्म विज्ञानके बलसे सारे संसारमें फैल गया होता और हिन्दू-धर्मके बलसे विज्ञान संसार के लिए सुखप्रद बना होता। इस प्रकारसे संसारका विनाशकारी नहीं बनता। परन्तु दुर्भाग्यसे आजतक ऐसा योग नहीं हुआ। आशा है आगे कभी अवश्य आ जाएगा, तब सारा संसार सुखी बन जाएगा।

जैनागमोंमें स्वाध्यायकी महत्ता

[लेखक— जैनमुनि श्री पं० ज्ञानचन्द्र जी महाराज]

भारतको पुण्यभूमि भी कहा जाता है, इसका कारण है भारतकी धर्मनिष्ठा। समय समय पर भारत भूने ऐसे महान् तपस्वी एवं तेजस्वी महापुरुषोंको जन्म दे कर अपनेको उज्ज्वल बनाया है; जिनकी महान् ज्ञान-ज्योतिका प्रकाश भारतमें ही नहीं अपितु भारतके बाहर भी साधकोंके साधना-पथको प्रकाशित करनेमें सफल रहा है। उनकी वाणीमें एक ऐसा रहस्य अवश्य छिपा रहता था जो कि अलौकिक होता था, साधकोंकी अन्दरकी आंखों पर आए हुए आवरण का आपरेशन करना ही उनका उत्तमोत्तम उद्देश था। उन्होंने संसारके सन्मुख आत्मविकासकी पूर्णता को उपलब्ध करानेवाले साधनोंको रक्खा।

आत्मविकास एक साधारण सी पहेली नहीं है। इसको बूझनेके लिए हजारों वर्षोंकी आवश्यकता है तथा अनेकानेक जीवनियोंकी आहुति देनी पड़ती है। आत्मविकासकी परिपूर्णता प्राप्त कराने वाला जीवात्मा आत्मा न रहकर परम-आत्मा बन जाता है। परम आत्माका अर्थ होता है— सर्वज्ञ, सर्वदर्शी, कर्मोंसे सर्वथा रहित, सांसारिक वातावरणसे सर्वथा पृथक, अपने स्वरूपमें ही रमण करने वाला निर्मल आत्मा।

आत्मिक-विकासगत परिपूर्णताकी उपलब्धिकी प्राथमिक भूमिकाका नाम ही स्वाध्याय है। स्वाध्याय आत्माकी अज्ञानावृत अवस्थाको हटाकर उसे स्वबोध में समर्थ बना साधना-पथका पथिक बना देता है। स्वाध्याय उस पथ्य वायुके सदृश है जो भयानक गर्जनोंसे समाधिस्थको भी डांवांडोल करने वाले जलभरके कारण काले काले घनघोर मेघमुण्डोंके चंगुल में फंसे हुए सूर्य्यको उनके—मेघोंके—चक्रव्यूहको छिन्नभिन्न कर मुक्ति दिलवा देती है। एवं जो संसार आलोकनके निमित्त सूर्यको आकाशमण्डलमें सानन्द विहरणके सौभाग्यसे सम्पन्न कर अपनी सच्ची मित्रता का आदर्श मित्रजगत्के सन्मुख रखती है। दूसरे शब्दोंमें स्वाध्याय भी उसी पवनकी भांति आत्मारूपी

सूर्य्यको आच्छादित किये हुए कर्ममेघोंको मूलतः विनष्ट कर उसे (आत्माको) अपने वास्तविक स्वरूपमें ला देता है।

वह स्वाध्याय पांच प्रकारका है जैसे कि—१—वाचना, २—प्रतिपृच्छना, ३—परिवर्तना ४—अनुप्रेक्षा, ५—धर्मकथा।

वाचना—शास्त्रोंके पठन पाठनको कहते हैं।

प्रतिपृच्छना—सूत्रार्थमें सन्देह उत्पन्न होने पर उसकी निवृतिके लिए जो विनयपूर्वक शङ्का समाधान के रूपमें चर्चा की जाती है वही प्रतिपृच्छना है।

परिवर्तना—पढ़े हुए सूत्रका पुनः आवर्तन ही परिवर्तना है। अनुप्रेक्षा—सूत्रार्थ चिन्तन दूसरे शब्दोंमें तत्त्वचिन्तन ही अनुप्रेक्षा है। धर्मकथा—दान, शील, एवं तप आदिका उपदेश ही धर्म-कथा कहलाता है।

प्रत्येक भेदमें अनेकों लाभ पाए जाते हैं। वाचना को ही लें, वाचनासे प्रथम तो शास्त्रोंके पठन पाठन की प्रथा बनी रहती हैं, दूसरे शास्त्रोंके अध्ययनसे उनकी अवज्ञा नहीं होने पाती। शास्त्रोंका न पढ़ना ही शास्त्रोंकी अवज्ञा हैं। तीसरे शास्त्रोंमें प्रतिपादित अहिंसा आदि धर्मोंका आश्रय लेकर कर्मोंकी निर्जरा-नाश करता हुआ जीव संसारका अन्त कर देता हैं—जन्म तथा मरणसे रहित हो जाता है। प्रतिपृच्छनासे सूत्र और उसका अर्थ दोनों ही शुद्ध हो जाते हैं। एवं परिवर्तनासे जीव अस्खलित सूत्रार्थ हो जाता है। अनुप्रेक्षा तथा धर्मकथाके लाभ भी स्पष्ट ही हैं।

एक बात और बड़े महत्त्वकी है — जैन धर्ममें सबसे बड़ा तथा उच्चपद तीर्थङ्कर* का होता है। तीर्थंकर होनेके अर्थ हैं कि वह जैन संसारका सर्वोत्तम पूजनीय महापुरुष बन जाता है। तीर्थङ्कर चौबीस (२४) हुये हैं। प्रथम भगवान् आदिनाथ जी, अन्तिम श्रीमहावीर स्वामी। भगवान् महावीर स्वामीने अपने प्रवचनमें स्वाध्यायका बड़ा मौलिक वर्णन किया है। उत्तराध्ययन सूत्र (एक जैन-आगम) में भगवान् महावीरने स्वाध्यायका महत्त्व इन शब्दोंमें व्यक्त किया है—"सज्झाएणं जीवे नाणावरणिज्जं कम्मं खवेइ" भावार्थ यह है कि जिन क्रियाओंके कारण ज्ञानाच्छादक कर्मवर्गणाएं आत्मप्रदेशोंके साथ लग रही वे स्वाध्यायके अनुष्ठानसे आत्मप्रदेशोंसे पृथक हो जाती हैं। दूसरे शब्दोंमें आत्माके साथ अनादिकालसे लगा हुआ जो कर्म-मल है वह स्वाध्यायके द्वारा दूर हो जाता है और आत्माकी ज्ञान-ज्योति प्रकट हो जाती है। वास्तवमें स्वाध्याय ही आत्माके भयंकर अज्ञान रोगके समूल नाशकी रामबाण महौषधी है।

*साधु, साध्वी, श्रावक (जैन गृहस्थ) तथा श्राविका रूप चतुर्विध संघ तीर्थ कहलाता है, तीर्थके संस्थापकको तीर्थङ्कर कहा जाता है।

भगवान् श्रीपरशुरामजीका राजनैतिक-माहात्म्य

[लेखक— श्री पं० बलजिन्नाथ शास्त्री बी० ए०]

अति प्राचीनकाल (वैदिककाल) से लेकर मौर्यों के समय तक भारतवर्षमें प्रायः सर्वत्र प्रजातन्त्र शासन ही प्रचलित था। यह बात वैदिक और बौद्ध साहित्यके अवलोकनसे सिद्ध होती है। स्वयं भगवान् बुद्ध जहाँ उत्पन्न हुए थे वह—कपिलवस्तुका राज्य—भी प्रजातन्त्र ही था। उस समयकी प्रजातन्त्रता और आधुनिक डेमोक्रेसीमें थोड़ा-सा भेद अवश्य है। आजकल तो राष्ट्रसभाके चुने हुए सदस्योंकी सबसे बलवान् पार्टी देश पर शासन करती है। छोटी-छोटी पार्टियां पददलित होती रहती हैं। परन्तु उस समय ऐसा नहीं होता था। उस समय प्रत्येक राष्ट्रमें एक पौरजानपद सभा हुआ करती थी। यही सभा एक राजाके मर जाने पर उसी राजवंशमें से सबसे अधिक योग्य राजकुमारको राजाके रूपमें चुन लेती थी। यदि राजाका ज्येष्ठ लड़का योग्य नहीं होता था तो छोटेको ही राज्य मिलता था। यदि राजवंशमें कोई भी योग्य न होता, तो अन्य वंशके किसी राजकुमारका अभिषेक किया जाता था। अभिषेकके अनन्तर यदि किसी राजामें राजोचित गुण नहीं दीखते अथवा यदि वह राज्य अच्छी प्रकारसे नहीं कर सकता तो उसे पदच्युत भी किया जाता था। ऐसी ऐसी बातोंके अनेकों उदाहरण मिलते हैं। इस प्रकारसे चुने हुए राजाको तत्त्वदर्शी महात्माओं द्वारा बनाए हुए राज्यनियमोंके अनुसार शासन करना होता था। राजा कभी भी नियमका भङ्ग नहीं कर सकता था। यदि कोई राजा ऐश्वर्य अथवा शक्तिके मद में आकर नियम भङ्ग करता तो प्रजा उसको कठोर दण्ड देती थी। प्रजाके नेता प्रायः विद्वान् ब्राह्मण और धनाढ्य वैश्य हुआ करते थे। विशेष करके प्राधान्य ब्राह्मणों ही का होता था। क्योंकि ब्राह्मणों ही में ऐसे सद्गुण अधिक हुआ करते थे जिनसे प्रजा पर उनका प्रभाव रहता था और जिनसे क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र आदि सभी सच्चे मनसे उनका अनुसरण करते थे। इस प्रकारसे राजा पर ब्राह्मणों की अनुयायिनी प्रजाका बड़ा अंकुश रहता था। इन्हीं प्रजातन्त्री नेताओंमें सबसे प्रधान नेता श्री भगवान् परशुरामजी थे। जहाँ जहाँ और जब-जब उनके समयमें बल संचय करके कोई क्षत्रिय राजा मदान्ध हो कर राज पदसे अनुचित लाभ उठाने और अपने स्वार्थको पूरा करनेका प्रयत्न किया करता था वहाँ वहाँ और तब तब वे उसका विरोध करके नाश करते और नवीन राजाको स्थापित करवाते थे। इस प्रकारसे उन्होंने अनेक बार प्रजातन्त्रता तथा पीड़ित प्रजाकी रक्षाके लिये राजाओंका संहार किया। इन्हीं प्रशस्य चरितोंके आधार पर पौराणिक कवियोंने वर्णन किया है कि उन्होंने इक्कीस बार क्षत्रिय जातिका सर्वनाश किया। राजविद्रोहोंमें अनेकों क्षत्रिय अवश्य मरे होंगे और इसी महाविनाशको कविने सर्वनाश शब्द द्वारा प्रकट किया होगा। उनके समयमें जनक आदि वंशोंके महात्मा क्षत्रिय भी तो थे। उनसे उन्होंने कभी द्रोह नहीं किया। इस कारण सर्वनाश शब्द अवश्य यहां लाक्षणिक ही हो सकता है। श्रुतिमें भी लाक्षणिक शब्दोंका प्रयोग मिलता है। अतः इसमें कोई विरोध नहीं।

इससे पाठक समझ गए होंगे कि राजनैतिक क्षेत्रमें कितने प्रशस्य काम श्रीपरशुरामजीने किए हैं। इन्हीं शुभ कार्योंसे उन्होंने अनेक संकटों से प्रजाकी रक्षा की। रक्षणशक्तिका ही नाम शास्त्रों में वैष्णवी शक्ति कहा गया है। इसी कारण श्रीपरशुरामजीको वैष्णवी-शक्तिके अंशका अवतार पण्डितोंने मान लिया। भगवान् परशुरामजी हमारे लिए एक उत्तम आदर्श हैं। हमें भी चाहिए कि उन्हींकी भांति सदा अपनी मातृभूमि और उसके निवासियोंको दुःशासनसे बचानेका प्रयत्न करें और

ज्योतिष और धर्मशास्त्र

[लेखक— श्री पं० हजारीप्रसाद जी द्विवेदी, सम्पादक 'विश्वभारती-पत्रिका']

मैंने 'श्रीस्वाध्याय' के गताङ्कमें पञ्चाङ्ग-शोधनके सम्बन्धमें एक लेख लिखा था। उस लेखकी ओर कुछ विद्वानोंका ध्यान गया है। उसे पढनेके अनन्तर उन्होंने उसके सम्बन्धमें दो बातोंकी ओर मेरा ध्यान विशेष रूपसे आकृष्ट किया है। (क) प्रथम यह कि मेरा सारा लेख गणित ज्योतिषकी दृष्टिसे लिखा गया हैं और यद्यपि स्यात् विशुद्ध ज्यौतिषिक दृष्टिसे उसका प्रतिपाद्य शुद्ध हैं तथापि उसमें भारतीय पञ्चाङ्गोंके दो प्रधान उद्देश्योंकी उपेक्षा की गई है। वे प्रधान उद्देश्य हैं (१) धर्मकृत्य और (२) फलादेश। इस देशमें पञ्चाङ्ग इसलिए बनते हैं कि उनसे जन-साधारण विवाह श्राद्ध आदि धर्मकृत्य उचित समय पर कर सके। इस लिए केवल गणितकी दृष्टिसे पञ्चाङ्ग-शोधनकी समस्या पर विचार नहीं किया जा सकता। (ख) दूसरी बात मुझसे यह पूछी गई है कि आधुनिक विशुद्ध गणनासे परिष्कृत पञ्चाङ्गके साथ यदि धर्मशास्त्रीय व्यवस्थाओंका विरोध हो तो क्या करना उचित होगा। प्रथम आपत्तिमें भारतीय पञ्चाङ्गोंके मूल उद्देश्यके विषयमें जो कुछ कहा गया है उसे मैं स्वीकार करता हूँ, इसलिए इन बातों पर अपनी नम्र सम्मति प्रकट करना आवश्यक समझता हूँ।

शुभ-शासनको स्थापित करें। ऐसा करने पर हमें देशसे किसी स्वार्थकी पूर्तिकी आशा कभी नहीं करनी चाहिए। निष्कामभावसे देशकी सेवा करते हुए परशुरामजीकी भांति तपस्वीकी वृत्तिसे जीवन निर्वाह करना चाहिए। चाणक्य जैसे ब्राह्मण समस्त भारतवर्षके साम्राज्यका सञ्चालन करते हुए भी स्वयं शिष्योंको पढ़ा कर अपना निर्वाह करते थे। वे परशुरामजीके सच्चे भक्त थे। हमें भी वैसा ही बनना चाहिये, तब कभी हमारा देश उन्नति करेगा।

जिन सज्जनोंने धर्मशास्त्रीय व्यवस्थाओंके साथ पञ्चाङ्ग-संस्कारके विरोधकी आशङ्का की है उन्होंने यह बतानेकी कृपा नहीं की है कि वे विरोध वस्तुतः क्या-क्या हैं। परन्तु नाना मतके पञ्चाङ्गोंकी भूमिकाओंसे और इन्दौरसे पं० दीनानाथ शास्त्रीके सम्पादनमें प्रकाशित 'इन्दौर-पञ्चाङ्ग-शोधन-कमेटीकी रिपोर्ट' से धर्मशास्त्री पण्डितोंके किए गए आक्षेपोंका अध्ययन करने पर मैं इस परिणाम पर पहुँचा हूँ कि ये विरोध दो प्रकारसे उत्थापित किए गए हैं। पण्डिताऊ वाद-विवादको यथासम्भव कम करके औसत सुसंस्कृत व्यक्तिको उन विरोधोंको समझाया जा सकता है और सहज बुद्धिके द्वारा उनका उत्तर भी खोजा जा सकता हैं। इन विरोधोंको दो मोटे भागोंमें विभक्त किया जा सकता है—

(१) प्रथम प्रकारका विरोध उन ग्रन्थोंके आधार पर किया गया है जो प्रधानतः धर्म-व्यवस्थाके ग्रन्थ हैं। निर्णयसिन्धु, धर्मसिन्धु आदि ग्रन्थोंके आधार पर उत्थापित शङ्काओंको मैं इस श्रेणीमें रखना चाहता हूँ और मेरा अपना विचार यह है कि ये ही वास्तविक धर्मशास्त्रीय शङ्काएं हैं।

(२) दूसरे प्रकारका विरोध उन ग्रन्थोंके आधार पर दिखाया गया है जो मूलतः ज्योतिषके ग्रन्थ हैं और प्रसङ्गवश उनमें धर्मशास्त्रीय व्यवस्थाकी भी बात आ गई है। सूर्यसिद्धान्तका वासनाभाष्य, कमलाकरका सिद्धान्ततत्त्वविवेक आदि ग्रन्थोंके आधार पर जो शङ्काएं उठाई गई हैं वे इसी श्रेणी की हैं। इनका धर्मशास्त्रीय महत्त्व इसलिए बढ़ गया है कि धर्मशास्त्रीय व्यवस्था देने वाले ग्रन्थोंने इन वचनोंको उद्धृत किया है।

नीचे हम एक एक करके इन दोनों पर विचार कर रहे हैं। विचार करते समय धर्मशास्त्री पण्डितोंके

वक्तव्योंको ज्योंका त्यों मान लिया गया है, क्योंकि हमारा उद्देश्य धर्मशास्त्रीय शङ्काओंका समझना ही है।

(१) निम्नलिखित शङ्का उत्थापित करते समय यह मान लिया गया है कि आधुनिक गणनासे शुद्ध करके जो पञ्चाङ्ग बनते हैं उनमें तिथिकी वृद्धि नौ घटी तक और क्षय दस घटी तक हो सकती है। अर्थात् तिथिका मान अधिकसे अधिक ६६ घटी तक और कमसे कम ५० घटी तक होता है (दिन और रात मिलाके ६० घटियां होती हैं)। पुराने पञ्चाङ्गों में अधिकसे अधिक तिथिका मान ६५ घटी और कमसे कम ५४ घटी तक दिया होता है, अर्थात् तिथि में ५ दण्ड (घटी) तक वृद्धि हो सकती है और ६ दण्ड (=घटी) तक ह्रास। इसीको 'बाणवृद्धि रसक्षयः' सिद्धान्त कहते हैं। यदि तिथिका मान इस प्रकारकी आधुनिक गणनासे निर्धारित किया जाय तो बहुतसे धार्मिक कृत्योंके करनेका समय मिलना ही असम्भव हो जायगा। ऐसा आक्षेप करनेवालोंके बताये हुए उदाहरणोंमेंसे एक सीधा उदाहरण लिया जाय। प्रदोष व्रत त्रयोदशी तिथिमें होता है। इस व्रतका मुख्यकाल धर्मशास्त्रीय ग्रन्थोंमें सूर्यास्तके बाद ६ घटी तक बताया गया है और गौणकाल सूर्यास्तके पहले ३ घटी तक कहा गया है। मान लीजिये कि आधुनिक गणनासे पञ्चाङ्ग बनाया गया जिसमें तिथि में दस घटी तक ह्रास होने की सम्भावना है। किसी दिन इस गणना के अनुसार मान लीजिए कि द्वादशी तिथि ३६ घटी और ४० पल तक रही। इसके बाद त्रयोदशी प्रारम्भ हुई और दूसरे दिन २६ घटी और ५८ पल रही। इसका मतलब यह हुआ कि त्रयोदशीका कुल भोग केवल ५० दण्ड और १८ पल रहा। यह आधुनिक गणनासे ही सम्भव है, पुरानी गणनासे कदापि नहीं। क्योंकि पुरानी गणनाके हिसाबसे तो कमसे कम तिथिभोग ५४ दण्ड होगा, उसके नीचे जा ही नहीं सकता। अब विचार कीजिए कि प्रदोष व्रत कब किया जायगा। इन विधानोंमें सूर्यास्त ३० दण्ड पर मान लिया जाता है। इस प्रकार प्रथम दिन सूर्यास्तके ६ दण्ड ४० पल बाद तक तो द्वादशी ही रही, इसलिए उस दिन मुख्यकालमें त्रयोदशी नहीं पाई गई। उस दिन व्रत नहीं हो सका। दूसरे दिन सूर्यास्तके तीन घटी पहलेसे ही गौणकाल शुरू होता है। सो गौणकाल आरम्भ होनेके पहले ही त्रयोदशी समाप्त हो गई। इस प्रकार दूसरे दिन भी व्रतका समय नहीं आ सका। इस प्रकार यदि आधुनिक वेध-सिद्ध गणनासे पञ्चाङ्ग बनेंगे तो उनसे धर्मकृत्योंमें भीषण बाधा उपस्थित होगी [देखिए, इन्दौर पञ्चाङ्ग शोधन कमेटीके रिपोर्टमें (पृ० ४४।४७) पं० राम कृष्ण शास्त्री का पत्र]।

इसे धर्मशास्त्रीय विरोधका एक आदर्श उदाहरण माना जा सकता है। अक्षयतृतीया और अष्टमी आदि तिथियोंमें निर्दिष्ट श्राद्धको लेकर भी आक्षेप किए गए हैं, परन्तु उनमें धर्मशास्त्री पण्डितोंका मतभेद हो सकता है (देखिए वहीं पं० दीनानाथ शास्त्रीका पत्र) इसलिए हम उन्हें छोड़ दे सकते हैं। ऊपर जो आक्षेप बताया गया है वह सारवान् जान पड़ता है और यदि पञ्चाङ्ग-संस्कारसे इस प्रकारके पत्रे बनने लगे जिससे साधारण जनता अपना धार्मिक कृत्य ही नहीं कर सके तो यह प्रयत्न न तो इस देशमें चलेगा ही और न अनुमोदनीय ही माना जायगा।

वास्तवमें यह समस्या इतनी गम्भीर नहीं है जितनी ऊपर ऊपरसे दिखाई देती है। धर्मशास्त्रीय व्यवस्था-ग्रन्थोंमें ऐसे प्रसङ्ग और भी बहुतसे आते हैं जो पुराने ढर्रेकी गणनासे भी उपस्थित हो जाते हैं और आचार्योंने उनका समाधान बताया भी है। ऐसे बहुतसे अवसर आते हैं जब एक ही धर्मकृत्यके लिये उचित समय दो दिन प्राप्त होते हैं और ऐसे भी अवसर आते हैं जिनका उचित समय दोनोंमेंसे किसी दिन नहीं आता। धर्मशास्त्रकी भाषामें पहले को 'उभयत्र व्याप्ति' कहते हैं और दूसरेको 'उभयत्रा-व्याप्ति'। ऊपर प्रदोष व्रतका जो उदाहरण दिया गया है वह 'उभयत्र-अव्याप्ति' का मामला है। यह कोई नई ज्योतिषिक समस्या नहीं है। पुराने ढर्रेके पञ्चाङ्गों में भी ऐसे अवसरोंके आजानेकी सम्भावना है,

जिसमें किसी विशेष अनुष्ठानके लिए न आज ही समय मिले और न कल ही। उदाहरणके लिए एकोद्दिष्ट प्रभृति श्राद्धोंको लिया जाय। व्यवस्थानुसार उसके लिए दिनके दो मुहूर्त्त श्रेष्ठ हैं, कुतप और रौहिण। कुतप दिनके १४ दण्ड बीतने पर शुरू होता है और रौहिण १६ दण्ड बीतने पर। प्रत्येक मुहूर्त दो दण्डका होता है। अर्थात् श्राद्धका प्रशस्तकाल १५वेंके आरम्भसे लेकर अट्ठारहवें दण्डके अन्त तक होता है। अब पुराने पञ्चाङ्गोंसे तिथि कमसे कम ५४ दण्ड (घटी) की तो होती ही है। कल्पना कीजिए अष्टमी तिथिमें श्राद्ध करना है। प्रथम दिन सप्तमी १८॥ दण्ड समझिए और दूसरे दिन अष्टमी १४ दण्ड। इस प्रकार यद्यपि अष्टमी ५५॥ दण्ड तक रही पर पहले दिन श्राद्धकालके बीतने पर आई और दूसरे दिन श्राद्धकालके आनेके पहले ही समाप्त हो गई। ऐसी समस्या तो पुराने ढङ्गके पत्रोंसे भी उठ हो सकती है। शास्त्रकारोंने ऐसे अवसरों पर पूर्व दिनको क्रिया करनेका विधान किया है। शतपथ-ब्राह्मणकी एक श्रुतिका भाव यह है कि "हम असमर्थ मनुष्य हैं, कल हमारा क्या होगा, यह कौन बता सकता है?" इस श्रुतिको प्रमाण रूपमें उद्धृत करके आचार्य लोग कहते हैं कि यदि उभयत्र अप्राप्ति हो तो पहले ही दिन अनुष्ठान कर लेना चाहिए। किसी किसी आचार्यने किसी किसी कृत्यके लिए पर दिनका भी विधान किया है। मतलब यह कि इन अनुष्ठानोंके आदर्श पर त्रयोदशीके दिन वाले व्रतका समाधान भी शास्त्रसे खोजा जा सकता है। उससे ज्योतिषिक संस्कारका कोई विरोध नहीं है। सच तो यह है कि पुराने धर्मशास्त्रीय ग्रन्थोंमें ही प्रदोष व्रतके इस प्रकार की समस्याका समाधान भी खोजा जा सकता है। निर्णयसिन्धुके सुप्रसिद्ध टीकाकार कृष्णभट्टने ऐसी तिथिकी सम्भावना मानकर भी विचार किया है जिसमें प्रदोष व्रत-कालकी व्याप्ति न पहले दिन हो और न दूसरे दिन। उन्होंने ऐसे पक्षकी कल्पना की है जिसमें त्रयोदशीके प्रदोष कालकी अव्याप्ति दोनों दिनों में है।* यह अव्याप्ति पुराने पत्रोंके आधार पर ही हुई है। फिर नये पत्रेसे भी यदि अव्याप्ति हुई तो दोष क्या है?

(२) अब दूसरे मत पर विचार कर लिया जाय। यह मत मध्ययुगके पिछले खेवेके ज्योतिषाचार्योंका है। इस मतका सारमर्म यह है कि ग्रहण युति आदि दृश्य पदार्थोंका साधन करते समय उनमें बीज-संस्कार से शोधित ग्रहों परसे गणना की जानी चाहिए, किन्तु व्रत-उपवास श्राद्ध यज्ञ आदिके लिए जो तिथि नक्षत्र बनाये जाँय वे प्राचीन-सिद्धान्तोंके अनुयायी हों। क्योंकि जिन ऋषियोंने व्रत-उपवासका विधान किया है उन्हींने तिथियोंकी गणना करनेकी रीति भी बना दी है। इसलिए धर्मकृत्यके लिए जो तिथिसाधन किए जाँय वे प्राचीन ऋषियोंकी गणनाके आधार पर ही किए जाँय।

इस दूसरे प्रश्न पर विचार करते समय यह ध्यानमें रखना चाहिए कि सूर्यसिद्धान्त, जिस रूपमें आज उपलब्ध है वह नया ग्रन्थ है। पुराना सूर्य-सिद्धान्त, जिसकी चर्चा वराहमिहिराचार्यने की है, अब उपलब्ध नहीं है। या तो वह लोप हो गया है या अत्यन्त परिवर्तित अवस्थामें आधुनिक सूर्य-सिद्धान्तमें अन्तर्भुक्त है। इस देशमें पुराने ढङ्गके पत्रे सूर्यसिद्धान्त, ग्रहलाघव या मकरन्दके मतसे बनते हैं। सूर्यसिद्धान्त यदि आर्ष ग्रन्थ हो भी तो ग्रहलाघव और मकरन्द कदापि नहीं हैं। और सही बात तो यह है कि सूर्यसिद्धान्तकी प्राचीन गणना भी एक भूली हुई कहानी है। इसलिए यह युक्ति ही निरर्थक है कि ऋषियोंके बताए हुए व्रत-उपवास ऋषियोंकी निर्धा-

* अत्र प्रदोषव्यापिनी (त्रयोदशी) ग्राह्या। तत्रैव पूजाविधानात्। प्रदोषस्त्रिमुहूर्तमित्यभिप्रायः। दिनद्वयेप्रदोष-व्याप्तानव्याप्तौ वा पूर्वा। 'त्रयोदशी तु कर्तव्या द्वादशी सहिता मुने।' इति सुमन्तूक्तेरिति मयूखकृतः। दिनद्वये प्रदोषव्याप्तौ तदव्याप्तौ साम्येन तदेकस्पर्शे वा उत्तरा। संकल्पकालेसत्वात्। वैषम्येणैकदेशस्पर्शे तदाधिक्यवती ग्राह्येति विवेचनानुसारिणः।

—सटीक निर्णयसिंधु, विद्याविलास-संस्करण १६३६, पृ० २४२८

रित प्रणाली पर हो रहे हैं। परन्तु पुराने पत्रोंके आधार ग्रन्थोंको यदि 'आर्ष' मान भी लें तो ऊपरकी युक्तिमें कोई तत्त्व नहीं है। क्योंकि इस युक्तिमें यह पहले ही मान लिया गया है कि ग्रहण आदि विषय आंखोंसे दिखाई देते हैं और प्रतिपद् आदि तिथियां आंखोंसे दिखाई नहीं देतीं। वस्तुतः यह धारणा ही हैं। प्रत्येक राह-चलता आदमी प्रतिपद् आदि तिथियों को चाहे न देख सके परन्तु थोड़ा बुद्धिमान् व्यक्ति भी यदि चाहे तो यन्त्र द्वारा मापकर प्रतिपदादि तिथियोंका आरम्भ और अवसान देख सकता है। क्योंकि तिथि कोई कल्पित मत या पारलौकिक धर्मशास्त्रीय विधान नहीं है। सूर्य और चन्द्रमाका अन्तर जब १२ अंश होता है तो एक तिथि हीती है। इस प्रकार कृष्ण पक्षकी एकादशीके दिन चन्द्रमा सूर्यसे ३००° से ३१२° के बीच रहेगा। यह अन्तर वेधसे जाना जा सकता हैं। इसलिए यद्यपि ग्रहणादि की भांति तिथि चर्मचक्षुसे ठीक ठीक नहीं देखो जाती पर गणितकी योग-दृष्टिसे वह प्रत्यक्ष है। उसे 'अप्रत्यक्ष' और 'अदृष्टार्थ फल-सिद्धिक' कहकर टाल नहीं दिया जा सकता। यदि ग्रहणमें बीज-संस्कृत ग्रह स्वीकार कर लिए जांय तो तिथि-गणनामें बीज-संस्कारकी उपेक्षा कुछ समझमें आनेवाली बात नहीं है। और सही बात यह है कि ऐसे वचन मूल संहिताओंमें कहीं भी नहीं हैं। फिर क्या ग्रहण-कालमें स्नान-जप आदिका जो निर्देश शास्त्रोंमें दिया गया हैं वह अदृष्टफल नहीं है ?

इस प्रकार जहां तक मैं समझ पाता हूँ धर्मशास्त्र और ज्योतिष-संस्कारमें जो विरोध बताए जाते हैं वे बहुत महत्त्वपूर्ण नहीं है। अब तक इस विषयमें धर्मशास्त्रीय विरोध कहकर जो कुछ कहा गया हैं वह विचारकी कसौटी पर कसनेसे सारवान् नहीं सिद्ध होता।

'श्रीस्वाध्याय' के यशस्वी विद्वान् सम्पादक श्री पं० हरदेवजी शर्मा त्रिवेदी और श्री पं० कृष्णचन्द्रजी ओझा द्वारा सम्पादित सं० २००२ का 'श्रीविश्वमार्तण्ड पञ्चाङ्ग' देखकर मुझे बहुत प्रसन्नता हुई। ऐसे शास्त्र शुद्ध सूक्ष्मगणितके पञ्चाङ्गों द्वारा ही विहित समयमें धर्मप्राण जनताके सभी धार्मिक पर्वव्रतादि क्रियायें सुसम्पन्न होनी चाहिएं और तज्ज्ञविद्वान् ऐसे पञ्चाङ्ग के प्रचारमें सहायक हों।

राशि स्वामियोंकी विशिष्ट उपपत्ति

[लेखक—ज्यौतिषालङ्कार श्री० पं० तारादत्त जी राजज्यौतिषी]

(गताङ्कसे आगे)

इस पृथिवीके पदार्थोंमें समीपवर्ती होनेके कारण चन्द्रमाका प्रभाव अधिक होता है। अधिक तेजस्वी होनेके कारण सूर्यका प्रभाव भी अधिक होता है। इसलिए इस पृथिवीमें स्थावर और जङ्गम सब पदार्थ सूर्य-चन्द्रमासे अधिष्ठित होनेसे सूर्य-चन्द्रात्मक हैं। इसीलिए कहा गया है कि—

"इदं जगत् स्थावरजङ्गमाख्यं सर्वं रवीन्द्वात्मकमाहुराद्याः"

नक्षत्र पृथिवीसे बहुत दूरी पर हैं। अश्विनीके तीन तारे, भरणीके तीन तारे, कृत्तिकाके छः तारे, इस प्रकार नक्षत्रोंके तारे शास्त्रमें वर्णित हैं। ये बड़े तारे हैं, छोटे बहुत हैं। इनकी विश्वसंचारिणी शक्तियां जो क्रान्तिवृत्तके मार्गसे पृथिवीकी ओर आती हैं सर्वतः व्याप्त होती हैं। अभेदोपचारसे इन शक्तियोंके समूहको भी भमण्डल कह सकते हैं। व्यवहारके लिए इन शक्तियोंके समूहका पृथक् नाम 'भौम भमण्डल' योग्य है। नक्षत्रोंके तारे ग्रहोंसे बहुत दूरी पर होने पर भी खूब चमकते दिखाई देते हैं। इसलिए उनका अत्यन्त विस्तीर्ण होना स्पष्ट

है। अतएव उनका प्रभाव भी विशेष है। यही भमण्डल ग्रहोंकी शक्तियोंके योगसे पृथिवीके स्थावर तथा जङ्गम पदार्थोंकी उत्पत्ति तथा नाशका कारण है। इस भौम भमण्डलकी शक्तियां सूर्य-चन्द्रमाकी शक्तियोंकी सहायतासे प्रभाव शालिनी होती हैं। बहुत दूरी पर पहुँचनेके कारण नक्षत्र तारा शक्तियोंकी बलाल्पता प्रभाव-शालिनी सूर्य-चन्द्र शक्तियोंके संयोगसे निवृत्त हो जाती है। सब पृथिवीके पदार्थोंके समान यह भौम भमण्डल भी सूर्य-चन्द्रमा से अधिष्ठित होनेके कारण सूर्य-चन्द्रात्मक सिद्ध होता है। इसलिए कहा गया है कि—

"तस्योद्भवोऽत्रापचयश्च दृष्टो भमण्डलेऽप्येव तदात्मकं तत् ।"

मघा नक्षत्र पितृ नक्षत्र है—

पितॄणां मघाः। तै० १।५।१।२॥ ३।१।१।६॥

सूर्य पितृ ग्रह है—

एष वै पिता य एष(सूर्यः) तपति। श० १४।१।४।१५॥

सूर्यः पिता च जन्तूनाम्। (बृहत्पाराशरहोरा)

इसलिए मघा नक्षत्रके आरम्भसे सूर्यात्मक नक्षत्रोंका आरम्भ होता हैं। चन्द्रमा मातृग्रह है—

चन्द्रो माता तथैव च। (बृहत्पाराशरहोरा)

माता पिताकी वामाङ्गी होती है। इसलिए मघा नक्षत्रके आरम्भसे विपरीत क्रमसे चन्द्रात्मक नक्षत्र हैं। "व्ययभवनगतश्चन्द्रो वामं हिनस्त्यपरं रविः" इत्यादि ज्यौतिषोक्तियोंसे भी चन्द्रमाका वाम विभागका अधिष्ठातृत्व प्रसिद्ध हैं। जो मघाका आरम्भ है, वही अश्लेषाका अन्त है। इसलिए कहा गया है कि—

"तस्यार्धमाद्यं कथितं मघादि
सार्पादि चान्द्रं कथितं परार्धम् ॥"

सूर्य-चन्द्रमा राज ग्रह हैं—

राजानौ रवि शीतगू (बृहज्जातक)

बहुत गृहोंके स्वामी अपने गृहोंको निवासके लिए औरोंको भी देते हैं। इसलिए सूर्य-चन्द्रमाने अपने राशिरूप दो-दो गृह एक-एक ताराग्रहको दिये हैं। सूर्य-चन्द्र रूप राजाओंकी शक्तियोंके सिंह-कर्क राशिमें व्याप्त होने पर सहचारी कर्मचारियोंके सदृश ताराग्रहोंकी शक्तियांभी सिंह-कर्क राशिकी आगे-पीछेकी राशियोंमें व्याप्त हुईं और उनकी स्वामिनी हुईं। जिस घरमें राजा निवास करता है, उसके आसपास मुख्य सेवकोंका भी रहना सेवाके लिए आवश्यक होता है।

एक सूत्रमें पिरोए हुए पांच दानोंमें एक दानेको उठा कर अन्यत्र रखने पर एक सूत्रमें बंधे होनेके कारण सब दाने क्रम-पूर्वक अन्यत्र हो जायेंगे। इसी प्रकार सजातीयताके सूत्रसे बंधी हुईं ताराग्रहोंकी शक्तियां भी सिंह-कर्क राशिकी आगे-पीछेकी राशियोंमें कक्षा—क्रमसे व्याप्त हो कर उनका आधिपत्य स्वीकार करती हैं। यह दूसरा प्रकार है। इस प्रकार—

"क्रमेण सूर्यः प्रददौ ग्रहाणां व्यस्तेन ताराधिपतिस्तथैव।
बुधस्य शुक्रस्य धरासुतस्य बृहस्पतेर्भास्करनन्दनस्य।
द्वे द्वे गृहे तेषु यथानुरूपं फलं विधेयं निपुणं विदग्धैः ॥"

यह उक्ति स्पष्ट रूपसे युक्ति-सिद्ध हुई। (क्रमशः)

नैर्मल्य

(पृष्ठ ८ का शेष)

करके तत्स्वरूप ही प्रकट होती है। परमानन्दका यह विलास मल और नैर्मल्यका हृदय है। यही इनका रहस्य है। अतः समस्त मलका वास्तविक स्वरूप पूर्ण आनन्द ही है। मलत्व तो उसका प्रातिभासिक स्वरूप ही है और उस प्रतिभासिकताका मूल भी वस्तुतः परम आनन्द ही है। मलोंकी कल्पना अपने आपमें करता हुआ भी परमेश्वर अपने वास्तविक नैर्मल्यसे च्युत नहीं होता। इसीमें तो उसकी परमेश्वरता और पूर्ण निर्मलता है। यही उसका परब्रह्मत्व है।

इस जगत् की क्रीड़ाके विलासमें यह परमेश्वर प्रधानभुत तीन मलोंकी कल्पना करता हैं। वे हैं—आणव मल, मायीय मल और कार्ममल। आणवमल की कल्पनासे अपनेको अणुरूपमें प्रकट करता हैं। अणु छोटेको कहते हैं। स्वयं बृहत् होते हुए भी इस मलकी कल्पनासे वह अपने आपको छोटा समझने लगता है। मायीय मलसे अपने वास्तविक स्वरूपको छिपा कर जीवरूपमें प्रकट हो जाता है।

खण्डग्रास ग्रस्तोदय चन्द्रग्रहण

एक मासमें दो ग्रहणोंका संसार पर प्रभाव

[लेखक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय']

वर्तमान सं० २००२ वि० ज्येष्ठ शुक्ल १५ सोमवार ता० २५ जून १९४५ ई० को खण्डग्रास ग्रस्तोदय चन्द्रग्रहण होगा। यह ग्रहण कहीं ग्रस्तोदय और कहीं कहीं चन्द्रोदय होनेके अनन्तर ग्रहण स्पर्श होगा। ग्रहणका स्पर्श सायंकाल नवीन स्टेण्डर्ड टाइम घं० ८ मि० ६ होनेसे जिन स्थानोंमें इस स्पर्श टाइमके अनन्तर चन्द्रोदय होगा वहाँ ग्रस्तोदय और जहाँ स्पर्श टाइमके पूर्व चन्द्रोदय होगा वहाँ ग्रस्तोदय नहीं होगा। दिल्ली राजपूताना मध्यभारत बम्बई गुजरात काठियावाड़ सिन्ध पंजाब काश्मीर और अफगानिस्तानमें ग्रस्तोदय होगा, अर्थात् ग्रहण स्पर्श होनेके अनन्तर चन्द्रोदय होगा। पूर्वीय भारत (बंगाल ब्रह्मदेश बिहार आसाम नेपाल तिब्बत काशी प्रयाग पटना आदि) चीन जापान आस्ट्रेलिया आदिमें ग्रस्तोदय नहीं होगा। सूक्ष्म दृश्यगणनानुसार नवीन प्रचलित स्टेण्डर्ड टाइमके अनुसार इस ग्रहणका स्पर्शादिकाल निम्न लिखित है —

मध्याह्नोत्तर स्टेण्डर्ड टाइम	घं०	मि०
स्पर्श (ग्रहण आरम्भ)	८	६
मध्य	९	४४
मोक्ष (ग्रहण समाप्ति)	११	२०

सर्वग्रहण (पर्वकाल) ३ घण्टे १४ मिनटका है।

यह स्पर्शादिका समय किसी एक स्थानका नहीं है, अपितु नवीन (परिवर्द्धित) स्टेण्डर्ड टाइमके अनुसार सम्पूर्ण भारतवर्षमें ऊपर लिखे समय पर ही स्पर्श मोक्ष होता हुआ दिखाई देगा। घड़ी रेडियो टाइम वा स्थानीय पोस्ट आफिससे ठीक मिली हुई होना आवश्यक है। छाद्य-छादक कक्षा भेद न होनेके कारण चन्द्र-ग्रहणका स्वरूप (ग्रास) भी सर्वत्र एक जैसा ही दिखाई देता है।※

※इस सम्बन्धमें विशेष निर्णय अर्थात् चन्द्रग्रहण कैसे कब और क्यों होता है? चन्द्रमा ग्रहण और राहु क्या वस्तु हैं? इनसे हमारा क्या सम्बन्ध है? ग्रहणमें दान जपादिका विशेष महात्म्य और भोजनादिका निषेध क्यों है? इत्यादि कई महत्त्वपूर्ण ज्ञातव्य बातोंका शास्त्रीय

कार्ममलकी कल्पना द्वारा शरीरी बन जाता है। इस प्रकारसे यह मलोंका उल्लास उसकी क्रीड़ामात्र है। वह हमारेसे भिन्न नहीं है। अतः यह हमारी अपनी क्रीड़ा है। अपनी ही क्रीड़ासे हमने अपने आपमें तीन मलोंकी कल्पना की है। यह हमारी क्रीड़ाका पूर्वार्द्ध हैं। अब उत्तरार्द्ध शेष रहता है। उसमें हमने अपने नैर्मल्य स्वरूपको पुनः पहचानना है और मलों की कल्पनाको पुनः मिटा-सा देना है। उस नैर्मल्य स्वरूपको पहचाननेके लिए सभी शास्त्र और सभी धर्म उपाय रूपमें संसारमें प्रकट हुए हैं। इन उपायों द्वारा अभ्यास करके नैर्मल्यको समझा जा सकता है। न्याय, सांख्य, बौद्ध, वेदान्त शैव, आदि दर्शन इस नैर्मल्यकी प्रत्यभिज्ञाके सोपान-तुल्य हैं जिनमें कोई सोपान कुछ ऊंचा तो कोई कुछ नीचा है। परन्तु जैसे निचला सोपान भी वैसा ही आवश्यक है जैसा कि चरम सोपान, वैसे ही सभी शास्त्र नैर्मल्य के प्रत्यभिज्ञानके लिए अत्यन्त आवश्यक हैं। हमें चाहिए कि इन शास्त्र रूप सोपानोंके मार्गसे अभ्यास द्वारा ऊपर ऊपर चढ़कर क्रमशः अधिक अधिक नैर्मल्यका प्रत्यभिज्ञान करते हुए अन्ततः अपने पूर्ण नैर्मल्यस्वरूपको पहचानकर अपनी पूर्ण आनन्दकी क्रीड़ाके इस दृश्यके उत्तरार्द्धका भी वैसे ही अभिनय करें जैसे इसके पूर्वार्द्धका अभी तक करते आए हैं।

ग्रहण-मध्य-कालके समय रात्रिके पौनेदश बजे उत्तरकी ओरसे चन्द्रबिम्बका कुछ चमकीला भाग शेष दिखाई देगा। शेष सारा चन्द्रबिम्ब काला हो जायेगा।

चन्द्रबिम्ब मान अंगुलादि		१२.०
ग्रास मान	,,	१०.४
शेष बिम्ब	,,	१.६

वेध और हवनादि कृत्य

इस ग्रहणका वेध (सूतक) समर्थ धर्मप्राण पुरुषोंको दिनके ११ बजकर ६ मिनटसे और पुत्रवान् गृहस्थियों तथा अशक्त बाल वृद्ध रोगियोंको मध्याह्नोत्तर ५ बजकर ६ मिनटसे मानना चाहिए। सोमवारको चन्द्रग्रहण होनेसे चूड़ामणि योग बना है। इसमें स्नान दान जप हवनादि करनेसे अनन्तगुण फल होता है।

ग्रहणमें यदि कोई पवित्र तीर्थस्थान मिल जाय तो सर्वोत्तम है। अन्यथा जहाँ जैसा स्थान उपलब्ध हो वहीं स्नान भगवद्भजन और यथा-शक्ति दान करना आवश्यक है। ग्रहणमें देश पात्र द्रव्यकी शंका नहीं करनी चाहिए। भगवान् व्यासने लिखा है —

सर्वं गङ्गासमं तोयं सर्वे ब्रह्मसमा द्विजाः।
सर्वाभूमिः कुरुक्षेत्रं ग्रहणे चन्द्रसूर्ययोः॥

ग्रहणके स्पर्श होते ही स्नान करके शुद्धासन पर बैठकर भगवन्नाम-जप इष्टदेव-स्मरण ध्यानादिमें लग जाना चाहिए। ग्रहणके मध्यमें हवन और देवार्चन होता है। यहां रात्रिके ९।२० से १०।१० पर्यन्त हवनादि कृत्य कर सकते हैं। दान तथा श्राद्धादिका संकल्प १०-१५ के उपरान्त होना चाहिए। लिखा भी है —

स्पर्शे स्नानं जपं कुर्यान्मध्ये होमं सुरार्चनम्।
मुच्यमाने प्रदातव्यं मुक्ते स्नानं विधीयते॥

राशियोंको शुभाशुभ

यह ग्रहण मूलानक्षत्र और वृषभ, कन्या, धनुः, मकर राशिवालोंको दुःख शोक चिन्तादि अशुभ फलकारक है। मेष, मिथुन, सिंह, वृश्चिक राशिवालोंको मध्यम और कर्क, तुला, कुम्भ, मीनराशि वालोंको श्रेष्ठ है। जिन राशियोंको यह ग्रहण अशुभ है वे लोग और गर्भवती स्त्रियां ग्रहणका दर्शन न करें। उन्हें कल्याणार्थ भगवद्भजन और यथाशक्ति दान हवनादि अवश्य करना चाहिए।

ग्रहणका संसार पर प्रभाव

यह ग्रहण समस्त संसारके लिए अनिष्टसूचक है। ग्रस्तोदय होनेसे राजयुद्ध प्रजानाश एवं दुर्भिक्षका द्योतक है। लिखा भी है — "ग्रस्तोदितौ च ग्रस्तास्तौ धान्यभूपाल नाशकौ"

उदितः सग्रहः सूर्यश्चन्द्रमा यदि वा भवेत्।
राजयुद्धं प्रजानाशं सर्वग्रस्तोऽतिदुःखदः॥

इस चन्द्रग्रहणके ठीक १५वें दिन सौर आषाढ़ मासमें (एक महीनेमें) ही आषाढ़ कृष्ण ३० को सूर्यग्रहण भी हो रहा है। चन्द्रग्रहणके १५वें दिन सूर्यग्रहणका फल संहिता ग्रन्थोंमें बहुत बुरा लिखा है। भयङ्कर राजयुद्ध हो, दुर्भिक्ष पड़े, दुष्टनीति और आधिव्याधियोंसे प्रजा का नाश हो, तथा किसी भी देश धर्म और जातिके मनुष्योंमें परस्परकी सद्भावना और प्रेम न रहे, यहाँ तक कि पति-पत्नीमें भी वैर-भाव वा कलह प्रकट होने लगे। यथा—

यद्येकमासे ग्रहणं भवेच्च शशिसूर्ययोः।
राजयुद्धं तदा ज्ञेयं क्षयं याति वसुन्धरा॥
सोमग्रहे निवृत्ते पक्षान्ते यदि भवेद् ग्रहोऽर्कस्य।
तत्रानयः प्रजानां दम्पत्योर्वैरमन्योन्यम्॥
एक पक्षमें भड्डुली दोयग्रहण हुवन्त।
महिडोले छत्र पड़े आई शाख गमन्त॥

और वैज्ञानिक रीतिसे सप्रमाण विस्तृत विवेचन हम 'श्रीस्वाध्याय' के प्रथम वर्षके दूसरे अङ्क (हेमन्ताङ्क) में कर चुके हैं। जो सज्जन अपनी उक्त जिज्ञासाएं पूर्ण करना चाहें वे कार्यालयसे मंगवाकर उस अङ्कमें देख सकते हैं। उस अङ्कका मूल्य अब २) रु० है। इस अङ्क सहित प्रथम वर्षकी पूरी फाइल ३॥) में प्राप्त कर सकते हैं।

इतना अच्छा है कि सूर्यग्रहण सम्पूर्ण भारतमें नहीं है, पश्चिमोत्तरीय सीमाप्रान्तमें कुछ मिनट दिखाई देगा, अतः सूर्यग्रहणका विशेष अनिष्ट प्रभाव भारत पर नहीं पड़ेगा। भारतके पश्चिमोत्तरीय देश अफगानिस्तान टरकी अरब ईरान ईराक और यूरोप पर इन ग्रहणोंका अनिष्ट प्रभाव अधिक होगा। इन दोनों ग्रहणोंके परिणामस्वरूप भारतसे सुदूरपूर्व एवं पश्चिमी प्रदेशोंमें नानाविध सङ्कट उत्पन्न होंगे। राजविग्रह, युद्ध, रोगोपद्रव, दुर्भिक्ष, पारस्परिक कलह, धर्मकलह अधिक हों। अग्नि वायु जल सम्बन्धी उत्पात भी अधिक हों। राजाप्रजामें असन्तोष बढ़े। किसी राजकीय अग्रगण्यकी मृत्यु हो। मन्त्रियोंमें मतभेद होकर शासनसूत्र सञ्चालनमें बाधा उपस्थित हो। इन ग्रहणोंका व्यापार पर भी बुरा प्रभाव पड़ेगा। कई वस्तुएं मिलनी दुर्लभ हो जायेंगी। चन्द्रग्रहण पर बुध शनिकी दृष्टि होनेसे पीले और कालेरङ्गकी वस्तु, तैल घृत मक्की, चना उड़द शहद सोना पीतल लोहा स्टील कस्तूरी आदि पदार्थोंका भाव तेज रहे।

सत्यवादी, पवित्र रहने वाले, व्यापारी, राज्यके उच्चाधिकारी, मजिस्ट्रेट जज न्यायाधीशादि पर ६ जुलाईके सूर्यग्रहणका अनिष्ट प्रभाव पड़ेगा। जहाँ-जहाँ यह ग्रहण दिखाई देगा वहाँ चावलादि धान्य, धातु, तिल, तैल, घृत, कम्बल, ऊनी वस्त्र और लोहेका भाव बहुत तेज रहे। आर्य अनार्योंमें असन्तोष, व्यापारकी स्थिति चिन्ताजनक, मन्त्रिमण्डलमें मतभेद, दुर्भिक्ष, वायु अग्नि जलादिका उत्पात, राजा प्रजाको दुःख, सेनामें असन्तोष और महाजनोंको कष्ट हो। जहाँ यह सूर्यग्रहण जितना अधिक दृष्टिगोचर होगा वहाँ इसका अनिष्ट परिणाम उतना ही अधिक होगा। इन ग्रहणोंका फल प्रायः ६ मास तक होगा।

ग्रस्तास्त सूर्यग्रहण

[लेखक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी]

आषाढ़ कृष्ण ३० सोमवार ता० ६ जुलाई १९४५ ई० को पश्चिमोत्तर भारतमें खण्डग्रास ग्रस्तास्त सूर्यग्रहण होगा। यह ग्रहण वायव्य सीमाप्रान्त, सिन्ध, क्वेटा, अरब, यूरोप, उत्तर ध्रुवप्रदेश, रशिया, उत्तरी अफ्रीका, अमेरिका आदिमें कहीं ग्रस्तास्त कहीं ग्रस्तोदय और कहीं कङ्कणाकृतिमें दिखाई देगा। पटियाला, शिमला, बीकानेरमें ग्रहण स्पर्श होते ही सूर्यास्त होगा। जहाँ जहाँ यह ग्रहण दिखाई देगा वहाँ वहाँ ही इसका वेधादि पालन करना चाहिए। यह ग्रहण दिल्ली—प्रान्त पूर्वदक्षिणी—पंजाब, युक्तप्रान्त, मध्यप्रान्त, मध्यभारत और राजपूतानामें बिल्कुल दिखाई नहीं देगा, अतः उक्त प्रान्तोंमें वेधादि माननेकी आवश्यकता नहीं। छाद्यछादक कक्षाभेदके कारण सूर्यग्रहण सर्वत्र एक जैसा दिखाई नहीं देता* और प्रत्येक स्थानका स्पर्श मोक्षकाल भी भिन्न-भिन्न होता है अतः पश्चिमोत्तर भारतके कुछ प्रधान नगरोंका स्पर्शकाल और सूर्यास्तकाल नवीन स्टेण्डर्ड टाइमके अनुसार अगले पृष्ठ ४० में देखें।

* सूर्यग्रहणके सम्बन्धमें सोपपत्तिक विशेष विवेचन, सूर्यग्रहण होनेका कारण, सूर्यग्रहण सर्वत्र एक जैसा क्यों नहीं दिखाई देता? कुरुक्षेत्रमें ही सूर्यग्रहणका विशेष महात्म्य क्यों माना गया? इत्यादि महत्त्वपूर्ण ज्ञातव्य बातोंका वैज्ञानिक ढंगसे शास्त्रीय उत्तर देखना चाहें तो 'श्रीस्वाध्याय' के तृतीयवर्षके 'ग्रीष्माङ्क' में देखिये। इस अङ्कका मूल्य अब २) रु० है।

नगर	ग्रहण स्पर्श घं० मि०	सूर्यास्त घं० मि०
अमृतसर	२०—२६	२०—४१
कराची	२०—५०	२०—५७
कपूरथला	२०—३०	२०—३८
क्वेटा	२०—४२	२१—६
कोहाट	२०—३०	२०—५७
खैरपुर	२०—४४	२०—५२
जम्मू	२०—२८	२०—४३
जालन्धर	२०—३०	२०—३७
जैकबाबाद	२०—४४	२०—५६
जैसलमेर	२०—४२	२०—४५
पेशावर	२०—२६	२१—०
फिरोजपुर	२०—३१	२०—४०
बीकानेर	२०—३८	२०—३८
भटिण्डा	२०—३३	२०—३३
भावलपुर	२०—३७	२०—४७
मुल्तान	२०—३६	२०—५०
मुजफ्फरगढ़	२०—३७	२०—५०
रावलपिण्डी	२०—२८	२०—५२
लाहौर	२०—३१	२०—४३
लुधियाना	२०—३०	२०—३४
श्रीनगर काश्मीर	२०—२५	२०—४१
शिकारपुर	२०—४४	२०—५७
हैदराबाद सिन्ध	२०—४४	२०—५२

सूर्यकी प्रखर तेज किरणों पर खुली आंखसे दृष्टि न टिकनेके कारण जब तक सूर्यबिम्बका १२वाँ भाग ग्रसित नहीं हो जाता तब तक काले शीशे वाले दूरवीक्षणादि यंत्रोंकी सहायताके बिना ग्रहण दिखाई नहीं दे सकता। श्री भास्कराचार्यने लिखा भी है— "तेजस्तैक्ष्ण्यात्तीक्ष्णगोर्द्वादशांशो नादेश्योऽतोऽल्पग्रहो बुद्धिमद्भिः।" लाहौर अमृतसरमें १२ मिनट या आधी घटीका ग्रहण है, अतः नवीन सूक्ष्म गणितकी परीक्षा करने वाले सज्जनोंको चाहिए कि वे सूर्यास्तसे आध घण्टा पहले नगरसे बाहर किसी ऐसे स्थान पर पहुँच जावें—जहाँसे पश्चिम क्षितिज और अस्त होता हुआ सूर्य भलीभांति दिखाई दे सके। किसी ऊंची अट्टालिकासे यदि ठीक पश्चिम क्षितिज दिखाई देता हो तो वहाँसे भी देख सकते हैं। घड़ी पहले ही रेडियो वा पोस्ट-आफिससे मिली हुई साथ ले जावें और दूरबीन पर काला वस्त्र रख कर सूर्यबिम्बको देखना प्रारम्भ करें। यदि दूरबीन न मिल सके तो पारदर्शक स्वच्छ शीशेके टुकड़े पर कज्जलकी स्याही लगा कर भी सूर्यबिम्ब देखा जा सकता है। अस्तके समय किरणें अधिक तेज भी नहीं होतीं अतः थोड़ेसे प्रयत्नसे ही स्पर्श-कालके अनन्तर पश्चिमकी ओरसे सूर्यबिम्बका कुछ सूक्ष्म भाग ग्रसित हुआ दिखाई देने लग जायगा और क्रमशः ग्रास बढ़ता हुआ सूर्यबिम्ब अस्त होगा। श्रीनगर (काश्मीर), मुल्तान, रावलपिण्डी, पेशावर, कोहाटमें यह ग्रहण अधिकाधिक (१६ से ३१ मिनट तक) दिखाई देगा, अतः वहाँके निवासियोंको इस चमत्कारकी अवश्य परीक्षा करनी चाहिए और वहाँकी धार्मिक जनताको इस ग्रहणके वेधादि नियम भी पालन करने चाहिएं। इस ग्रहणका वेध ता० ६ जुलाईके सूर्योदयसे ही प्रारम्भ होगा और ग्रस्तास्त होनेके कारण दूसरे दिन ता० १० जुलाई मंगलवार को प्रातः सूर्यदर्शन करके भोजनादि करना चाहिए। अशक्त बाल वृद्ध रोगियोंके लिए यह नियम नहीं है।

राशियोंको शुभाशुभ

यह सूर्यग्रहण पुनर्वसुनक्षत्र और मिथुन, कर्क, वृश्चिक, मीन राशि वालोंको दुःख-शोक चिन्तादि नेष्ट फलकारक है। वृषभ, तुला, धनुः, कुम्भराशियों को मध्यम और मेष, सिंह, कन्या, मकर राशिवालोंको श्रेष्ठ है। संसार पर इसका प्रभाव पहले चन्द्रग्रहणके फलमें लिखा जा चुका है।

त्रैमासिक पर्व व्रतादि निर्णय

द्वि० चैत्र शुक्ल	११ सोमवार	ता० २३ अप्रैल	कामदा एकादशी व्रत
	१२ मंगलवार	ता० २४ ,,	भौमप्रदोष व्रत अनङ्ग १३ कामेश्वर पूजा
	१४ गुरुवार	ता० २६ ,,	सत्यव्रत
	१५ शुक्रवार	ता० २७ ,,	चैत्री १५ वैशाख स्नानारम्भ
वैशाख कृष्ण	४ मंगलवार	ता० १ मई	श्रीगणेश ४ व्रत चन्द्रोदय रात्रौ नवीन स्टे० टा० ११।३०
	११ मंगलवार	ता० ८ ,,	वरूथिनी एकादशी व्रत
	१२ बुधवार	ता० ९ ,,	प्रदोष व्रत
	३० शुक्रवार	ता० ११ ,,	अमावास्या, मेला पञ्जौर (कालका)
वैशाख शुक्ल	२ रविवार	ता० १३ ,,	चन्द्र दर्शन
	३ सोमवार	ता० १४ ,,	अक्षया ३ श्रीपरशुराम जयन्ती वृषभ संक्रान्ति मु०३० पुण्यकाल मध्याह्न यावत्
	४ मंगलवार	ता० १५ ,,	भक्तराज श्री सूरदास जयन्ती
	५ बुधवार	ता० १६ ,,	श्रीशङ्कराचार्य जयन्ती
	७ शुक्रवार	ता० १८ ,,	श्रीगङ्गा सप्तमी
	११ मंगलवार	ता० २२ ,,	मोहिनी एकादशी व्रत
	१३ गुरुवार	ता० २४ ,,	प्रदोष व्रत
	१४ शुक्रवार	ता० २५ ,,	श्रीनृसिंह जयन्ती, एम्पायरडे
	१५ शनिवार	ता० २६ ,,	कूर्म जयन्ती सत्य व्रत
	१५ रविवार	ता० २७ ,,	वैशाखस्नान समाप्ति, जलकुम्भदान
ज्येष्ठ कृष्ण	३ बुधवार	ता० ३० ,,	श्रीगणेश ४ व्रत चन्द्रोदय नवीन स्टेण्डर्ड टाइम ११।१५
	११ बुधवार	ता० ६ जून	अपरा (भद्रकाली) एकादशी व्रत
	१२ गुरुवार	ता० ७ ,,	प्रदोष व्रत
	३० रविवार	ता० १० ,,	वटसावित्री अमावास्या
ज्येष्ठ शुक्ल	१ सोमवार	ता० ११ ,,	चन्द्रदर्शन
	३ मंगलवार	ता० १२ ,,	हिन्दुआँसूर्य वीरवर महाराणा श्री प्रताप जयन्ती
	१० बुधवार	ता० २० ,,	श्रीगङ्गा दशहरा
	११ गुरुवार	ता० २१ ,,	निर्जला एकादशी व्रत
	१२ शुक्रवार	ता० २२ ,,	प्रदोष व्रत
	१५ सोमवार	ता० २५ ,,	सत्यव्रत ग्रस्तोदय खण्डग्रास चन्द्रग्रहण
आषाढ कृष्ण	३ गुरुवार	ता० २८ ,,	श्रीगणेश ४ व्रत चन्द्रोदय नवीन स्टैंडर्ड टाइम रात्रौ १०।५०
	११ गुरुवार	ता० ५ जुलाई	योगिनी एकादशी व्रत
	१३ शनिवार	ता० ७ ,,	शनिप्रदोष व्रत
	३० सोमवार	ता० ९ ,,	सोमवती अमावास्या
आषाढ शुक्ल	२ बुधवार	ता० ११ ,,	श्रीजगदीश रथयात्रा, चन्द्रदर्शन
	९ बुधवार	ता० १८ ,,	भडुली ९ काश्मीर मण्डल जन्म दिन

वार्षिक राशिफल—

सं० २००२ वि० किस राशिको कैसा रहेगा ?

[लेखक—ज्योतिर्विचारत्न श्री पं० कृष्णचन्द्रजी शर्मा ओझा, केतकी पंचाङ्गकर्ता]

मेष

जिनकी मेष राशि वा मेष लग्न है उनको यह वर्ष द्विधा फल कारक है। वर्षके पूर्वार्धमें व्यापारसे लाभ, कुटुम्बमें प्रेम, मित्रोंकी वृद्धि, श्रेष्ठ पुरुषोंसे मैत्री, प्रयाण, वैभवादिका सुख होनेका योग है। परन्तु उत्तरार्द्धमें क्लेश, विघ्न, मानसिक चिन्ता, कुटुम्ब चिन्ता, प्रयाणमें कष्ट, व्यय अधिक व्यापारमें हानि, राजकी ओरसे कष्ट, सन्ततिको पीड़ा, स्त्रीसे कष्ट आदि होंगे। मित्र शत्रु बनेंगे। पराक्रमी होते हुए भी पराक्रम पीछे गिरेगा।

वृषभ

वृषभ लग्न वा वृषभ राशिके पुरुषोंको इस वर्षमें पहले कुछ मासों तक साढसाती होते हुए भी यह वर्ष लाभप्रद जायगा। व्यापार या नौकरीमें उन्नति हो। द्रव्य-प्राप्ति अल्प कष्टसे अधिक हो, बन्धुओंमें क्लेश और मतभेद हो। कुटुम्बमें वरिष्ठ मनुष्यकी मृत्यु या महाकष्ट हो, जिससे अन्य कार्यों में वाधा हो। ज्ञानकी वृद्धि और श्रेष्ठ पुरुषोंका मिलन होकर उससे लाभ होगा, गायन, मन्त्र, तंत्र, आदि पर चित्ताकर्षित होगा।

मिथुन

मिथुन लग्न वा राशिके मनुष्योंको यह वर्ष कष्ट मय जान पड़ता है। अतः बहुत सम्हलकर रहनेकी आवश्यकता है। मानसिक, कौटुम्बिक, राजकीय, एवं व्यापारिक पक्षमें भारी क्रान्ति होगी, पराक्रमकी हानि मित्रोंसे वैर, राज पक्षसे उलझन और कौटुम्बिक हानिके योग हैं। व्यापारकी या नौकरीकी स्थिति "लक्ष्मण झूले" की भांति रहेगी। खर्च अधिक जान पड़ता है।

कर्क

कर्क राशि वा लग्नके मनुष्योंको यह वर्ष बहुत ही आन्दोलनका जायगा। कार्य करनेमें बाधा विघ्न आदि कई आपत्तियें निर्माण होकर कार्यकी क्षति होगी। पूर्वार्द्धमें व्यापार या नौकरीमें कई कष्ट प्राप्त होंगे, जिसमें आक्षेपजन्य कार्य हाथसे होकर उसमें उसका प्रायश्चित भोगना पड़ेगा। शांतिके लिये मनोनिग्रह करनेकी आवश्यकता हैं।

सिंह

सिंह लग्न वा सिंह राशिके मनुष्योंको वर्षका पूर्वार्द्ध कुछ ठीक और लाभप्रद जायगा। व्यापार और नौकरीमें कई विघ्नोंका उपद्रव होगा, शत्रु बहुत होंगे, फौजदारी जैसे प्रकरण होकर राजपक्षमें द्रव्यका खर्च अधिक होगा। प्रकृति मानसे भी यह वर्ष ठीक नहीं है, अतः प्रकृतिकी ओर अधिक खयाल रक्खें, वर्षका उत्तरार्द्ध अधिक कष्ट मय खर्च मय क्लेश मय जानेका योग दिखाई देता है।

कन्या

कन्या राशि वा लग्नको यह वर्ष क्रान्तिका जायगा, व्यापार या नौकरीमें परिवर्तन होगा, उद्योग धंदेमें अयशस्विता और हानि होगी, हिस्सेदारों और साथियोंमें वैमनस्य उत्पन्न होगा, जिससे कुछ हानि होनेका योग ज्ञात होता है। शुभ कार्यमें प्रवृत्ति होगी और उसमें कुछ द्रव्यका सदुपयोग होगा, धार्मिक क्रियाओंमें खर्च होगा, व्यापार या नौकरीमें सावधानीसे काम लें।

तुला

तुला लग्न वा राशि वालोंको इस वर्षमें ऐश आरामकी ओर चित्त अधिक रहेगा। परन्तु उनकी

ऐश आरामीमें दोष अधिक उत्पन्न होकर दूसरी और वाधाएं तथा हानिके प्रश्न उत्पन्न होंगे। शत्रु अधिक उत्पन्न होकर उनकी ओरसे कष्ट होगा, पूर्वार्द्धमें कौटुम्बिक आनन्द, द्रव्य लाभ और उत्तरार्द्धमें कौटुम्बिक क्लेश द्रव्य हानि होगी।

वृश्चिक

वृश्चिक लग्न वा राशि वालोंको यह वर्ष स्वास्थ्य की दृष्टिसे ठीक नहीं है। अपचन, अरुची, अशक्ति, कफ, कास, आदि रोग होंगे। शारीरिक स्थितिके अनुसार व्यापार या नौकरीमें हानिका योग हैं, फिर भी पूर्वार्द्ध लाभप्रद और उत्तरार्द्ध कुछ हानि प्रद जायगा। स्त्रीको कष्ट होनेका योग है। मित्रोंसे सहायता मिलेगी।

धनुः

धनुर्लग्न वा राशि वालोंको यह वर्ष आर्थिक दृष्टिसे बहुत ही उलट सुलट जायगा। इस साल गुरु महाराजकी कृपा होनेसे कई आपत्तियें टला करेंगी। तीर्थ यात्रा तथा शुभ कर्मकी और प्रवृत्ति रहा करेगी, स्थान परिवर्तन होगा, पर्यटन होकर उसमें खर्च होगा। उत्तरार्द्ध में कई आपत्तियोंका सामना करना पड़ेगा, खर्च बहुत होगा, बान्धवोंमें किसीकी मृत्यु होगी, व्यापार या नौकरी ठीक रहें।

मकर

मकर लग्न वा राशिके मनुष्योंको यह वर्ष स्वास्थ्यकी दृष्टिसे ठीक नहीं हैं, पूर्वार्द्धमें ज्वर आदिसे पीड़ा होगी, कुटुम्बियोंको अधिक कष्ट होगा, स्त्रीको वातोष्ण विकार होगा, फिर भी रोग शत्रु आपत्तियों का निवारण होता रहेगा। उद्योग और नौकरीमें बढ़ती होगी, उत्तरार्द्ध में मानसिक कष्ट अधिक होगा।

कुम्भ

कुम्भ लग्न वा राशिके मनुष्योंको यह वर्ष पूर्वार्द्ध में व्यापार या नौकरीमें उन्नतिका जायगा, नये नये उद्योग होंगे और उनमें लाभ होगा, उत्तरार्द्ध में शत्रुओंका अधिक उपद्रव होगा और स्वास्थ्य भी बिगड़ेगा, व्यापारमें वा नौकरीमें हानि होगी, द्रव्यका खर्च अधिक होगा, सन्ततिको पीड़ा कारक योग हैं। व्यापार या राज्यमें द्रव्य हानिका योग है, सावधान रहें।

मीन

मीन लग्न वा राशि वालोंको यह वर्ष अधिक व्यय कारक जायगा। इस वर्षमें एकमुस्त खर्च होनेके योग अधिक पाये जाते हैं। कुमारोंके तथा कुमारिकाओंके विवाह होंगे। उत्तरार्द्ध में व्यापार उद्योग नौकरी आदिमें उन्नति होकर द्रव्य लाभ समाधान कारक होगा, कार्यमें समयकी कमी रहेगी, प्रवासमें वाधा अधिक होगी। पूर्वार्धमें स्थान-परिवर्तन होगा। कहीं योग्य कारणसे पर्यटन होकर उसमें लाभ होनेका योग है।

कुरालीके श्रीमार्तण्ड पंचाङ्गकर्ताजीसे खुला प्रश्न ?

सं० २००२ के 'मार्तण्डपञ्चाङ्ग' के टायटलपेज पर वर्षका राजा गुरु लिखा है, परन्तु वर्षफल श्रवण और तैलाभ्यङ्ग इसी पंचाङ्गमें द्वितीय चैत्र शु० १ शुक्रवार ता० १३ अप्रैलको लिखा गया है, इसका क्या कारण ? जो वर्षका राजा हो उसी दिन वर्ष वर्षेशपूजन ध्वजारोपण वर्षफलश्रवण तैलाभ्यङ्ग निम्बपत्रभक्षणादिका विधान शास्त्र-विहित है। मार्तण्डपंचाङ्गमें जब राजा गुरु लगाया है तो वर्षफलश्रवण तैलाभ्यङ्ग भी गुरुवार १५ मार्चको ही लिखना चाहिये था। दोनों घोड़ोंपर पैर रखने वाली यह दुरंगी नीति जान-बूझ कर अपनाई गई है या आपके पास इसका कोई प्रमाण है ? यदि दो चैत्रोंमें प्रथम चैत्र शु० १ को वर्षका राजा और द्वि० चैत्र शु० १ को वर्षारम्भ वर्षफल-श्रवण तैलाभ्यङ्गके विधानका कोई शास्त्रीय प्रमाण हो तो प्रकाशित करानेकी कृपा करें, ताकि सर्वसाधारण जनताका भ्रम दूर हो।

निवेदक—
पं० गोविन्ददत्त मिश्र, चौबुर्जा, भरतपुर।

दैवज्ञकी दृष्टिमें संसारचक्र

सं० २००२ वि० का अन्तर्राष्ट्रिय भविष्य

क्या निकट भविष्यमें विश्वशान्ति हो सकेगी ?

[लेखक—श्री हरदेव शर्मा त्रिवेदी, सम्पादक 'श्रीस्वाध्याय']

'श्रीस्वाध्याय' के गताङ्कमें हमने सन् १९४५ और सं० २००२ वि० का आरम्भिक भविष्य ३ पृष्ठोंमें विस्तृतरूपेण लिखा था। भारतवर्ष और भारतीय नेताओंका भविष्य भी हमने उसमें अङ्कित किया है। उसमें स्पष्ट लिखा है कि—"सं० २००२ की ग्रहस्थिति हमें संसारके लिए पूर्ण शान्तिदायिनी एवं सुखप्रद प्रतीत नहीं होती। ....ता० १५ मार्चसे दो मास पर्यन्त विश्वशान्ति वा सन्धि-चर्चाके मेघ विशेषरूपसे मँडराते रहेंगे। ....मित्रराष्ट्रोंके कर्णधारोंका परस्पर मिलन आवागमन और लम्बी परामर्श होगी। ....भारतके वर्तमान वायसराय श्री लार्ड वेवल महोदयको इस वर्षके पूर्वार्द्धमें किसी महत्त्वपूर्ण मन्त्रणाके लिये यूरोप-यात्रा करनी पड़ेगी। भारतीय समस्याओंको सुलझानेका प्रयत्न भी आपकी ओरसे होगा ....।" इत्यादि कई बातें समयकी वर्तमान घटनाओंने सत्य प्रमाणित कर दी हैं और आगे भी यथासमय पाठकोंको अनुभव होता रहेगा। गताङ्कमें स्थानाभावके कारण यूरोप अमेरिका आदि का जो अन्तर्राष्ट्रिय भविष्य नहीं दिया जा सका था वह अब यहाँ दिया जा रहा है —

अन्तर्राष्ट्रिय जगत्

शासन-चक्रोंमें, युद्धकी गतिविधिमें, राष्ट्रोंके रूपान्तरोंमें कई अकल्पित आश्चर्यजनक घटनायें घटित हो जावेंगी। मित्रोंमें मनोमालिन्य होगा। सम्पूर्ण वैज्ञानिक साधनोंका परस्परमें घातप्रतिघात होकर विपुल जन-धन सम्पत्ति नष्ट होगी। चीनके प्रजातन्त्रमें क्रान्ति होकर वह अन्य समीपवर्त्ती राष्ट्रसे सहयोगके लिए बाध्य होगा। रूस जापानमें ठन जानेके प्रसंग उपस्थित होंगे, परन्तु शीघ्र कार्यरूप में परिणत न हो सकेगा। जर्मनीको सर्वदाके लिए निर्बल बनानेका मित्रोंकी ओरसे प्रयत्न होगा। विजेताओंका भी परस्परमें सद्भाव और विश्वास नहीं रहेगा। जर्मनीके विजित प्रान्तोंके बटवारेके प्रश्नमें मतभेद होकर नवीन युद्धके बीजारोपण होनेकी सम्भावना है। अटलाण्टिक चार्टर व्यर्थ सिद्ध होकर कोई नवीन बँटवारा या संधिपत्र होगा। यूरोप और एशियाके हिताहित पक्षपातपूर्ण दृष्टिसे देखे जावेंगे। वर्षके उत्तरार्धमें युद्ध-ग्रस्त-राष्ट्रोंमें अस्थायी शान्ति होनेकी सम्भावना है। परन्तु आगे रूसमें अशान्ति फैलेगी और किसी छोटे राष्ट्र पर रूसका पुनः आक्रमण होनेसे फिर नवीन युद्धकी भूमिका बनेगी। सारांश यह कि इस वर्षमें समस्त संसारमें शान्ति स्थापित होकर युद्ध एकदम बन्द नहीं होगा। एक ओर युद्ध समाप्त होगा तो दूसरी ओर आरम्भ हो जायेगा।

इंगलैण्ड—कुछ आपसी कलहकी सम्भावना है, परन्तु वह शीघ्र ही मिट जायगा। उत्पादन बहुत न्यून होगा। जनताको स्फोटक द्रव्योंसे अथवा बिमारी वा उत्पातोंसे भारी कष्ट होगा। परन्तु जनताके धैर्य संगठन और सहनशक्तिकी कमी नहीं होगी। इस महायुद्धमें मित्रोंकी विजय तो होगी, परन्तु इस विजयका मूल्य इन्हें बहुत महँगा चुकाना पड़ेगा। उत्तरार्धमें श्री चर्चिल महोदयका स्वास्थ्य खराब होने और श्री सम्राट् महोदयको प्रबासमें कुछ कष्ट होनेका योग है।

अमेरिका—श्री रूजवेल्ट महोदयकी शासनशक्ति यथापूर्व बनी रहेगी । वर्षका उत्तरार्ध स्वास्थ्यकी दृष्टिसे विशेष उत्तम नहीं है । विरोधियोंकी ओरसे शासन-कार्यमें कई प्रकारकी बाधाएं उपस्थित होंगी। अक्टूबरसे फरवरी १९४६ तकका समय संघर्षमय रहेगा। धान्य रुई धातु आदिका उत्पादन न्यून हो और पूर्वीय अमेरिकामें दुर्भिक्षकी संभावना है। व्यापार नीचे गिरे । दक्षिण अमेरिकामें उपद्रव अधिक हों, दुर्भिक्ष पड़े, कारखानोंमें हड़ताल या स्फोट हो। जलयानों, वायुयानों और शस्त्रास्त्रोंकी भारी हानि हो। जापानके साथ भयङ्कर युद्ध होगा, जिसमें जापानकी भी क्षति होगी । अर्थनीतिसे अन्यान्य राष्ट्रोंमें असन्तोष बढ़ेगा।

रूस—शासनशक्ति और महत्त्वाकांक्षाएं बढ़ेंगी। रशियाका आगामी भविष्य उज्ज्वल है। मिथुन कर्क का शनि श्री स्टालिन महोदयको शान्तिसे नहीं बैठने देगा। किसी-न-किसी के साथ कुछ संघर्ष छिड़ा रहेगा। वर्षके उत्तरार्धमें श्री स्टालिन महोदय के लिए शत्रु-मित्रत्वमें क्रांतिपातका योग हुआ है।

जर्मनी—मिथुनके शनिमें हिटलरका युद्धमें पीछे हटना और जर्मनराष्ट्रकी अपार क्षति होना स्वाभाविक ही है। परन्तु यही शनि हिटलरके साहस और शासनशक्तिको तीव्र करके कई प्रकारके आश्चर्यजनक आविष्कार भी करवाता है। चैत्रसे ज्येष्ठ तकका समय जर्मनीके लिए बहुत खराब हैं, उस समय हिटलरकी आंशिक पराजय हो सकती है, परन्तु १९४६ तक राहु महादशामें अनेक आपत्तियां आने और आक्रमण होने पर भी उसका पूर्णरूपेण विनाश या आत्मसमर्पण होना कुछ कठिन प्रतीत होता है।

जापान— इस वर्ष जापानकी शक्ति बहुत नष्ट होगी। चीनमें पूरी शक्ति लगा कर वह सफलताका प्रयत्न करेगा। कर्कके शनि मंगलमें युद्ध और आधिदैविक आधिभौतिक उपद्रवोंसे जापानकी बहुत हानि होगी। भारतके पूर्वमें जापान और मित्रोंमें घनघोर युद्ध होगा, जिसमें पहले दोनोंकी भारी क्षति होगी, पर अन्तिम परिणाम मित्रोंके अनुकूल रहेगा। सितम्बरसे मार्च १९४६ तक जापान के लिए विशेष अनिष्ट योग है।

बंगलौरके सुप्रसिद्ध ज्योतिषी 'एस्ट्रालॉजिकल मेग्ज़ीन' के सम्पादक श्री प्रो० बी० वी० रमन महोदय ने अपने अंग्रेजी पत्रमें वर्तमान सन् १९४५ और सं० २००२ का जो भविष्य दिया है उसका सारमर्म (हिन्दी अनुवाद) पाठकोंके लाभार्थ यहाँ दिया जाता है—

संवत् २००२ का वर्षफल

सं० २००२ वि० की वर्षलग्नकुण्डली देखनेसे लग्नमें मेष राशि है। शुक्रका इस पर अधिकार हैं। बृहस्पति और मंगलकी इस पर दृष्टि हैं। इंग्लैण्ड की राशि शुभस्थिति पर हैं। इसका शासकग्रह शक्तिशाली है। इसका परिणाम इंग्लैण्डके अनुकूल है। पर इससे भारतके लिए कोई आशा नहीं करनी चाहिये। ग्रहोंकी स्थितिसे स्पष्ट है कि कष्ट और विनाशका अन्त धीरे धीरे हो जायगा और अनुकूल परिस्थिति उत्पन्न होगी। राहु और शनि एक-दूसरे से अलग अलग होंगे और इनके बीचका अन्तर १५ अंशसे कम न होना चाहिये और यह हमें सितम्बर और अक्टूबरमें पहुँचा देता है।

शुक्रके लग्नमें होनेसे प्रतीत होता हैं कि स्त्रियों का प्रभाव बढ़ेगा और जीवनके प्रत्येक क्षेत्रमें वे पुरुषोंसे प्रतियोगिता करेंगी। गृहोंमें संघर्ष बढ़ेगा और कौटुम्बिक बन्धन शिथिल होते जावेंगे। कला, संगीत, कविता, नाटक और समाजको प्रोत्साहन मिलेगा और सार्वजनिक जीवनमें भी स्त्री और पुरुष के बीचका सम्बन्ध कम औपचारिक और अधिक घृणित हो जावेगा। सूर्य और चन्द्र पर शनिकी दृष्टि है, अतः अनेक राज्य-परिवार शोकमग्न होंगे। मित्रोंकी भारी विजय होगी।

वर्षेशलग्न या जगल्लग्नकुण्डली देखनेसे ज्ञात होता है कि केतु ५वें घरमें बैठा है। इस कारण

बाल-मृत्युएं बड़ी संख्यामें होंगी। मंगलकी कुम्भमें स्थिति सिंहके लिए योगकारक है और इस कारण वर्षके मध्य तक यूरोपकी ओर हमारी अधिक सहानुभूति रहेगी। मंगल ब्रिटेन और संयुक्तराष्ट्र अमरीका के लिए लाभजनक हैं।

मित्रराष्ट्रोंकी गवर्नमैण्टोंकी नीति अनिर्णय, सन्देह, ढिलमुल हो इसका भय है, पर वे धार्मिक नेताओंके अनुकूल नीति अपनाएंगे। सौर वर्षके आरम्भमें शनि आर्द्रामें हैं; फलतः इस समय संचित अन्न २, ३ मासके अन्दर बेचनेसे बहुत लाभ होगा। सर्वत्र राशनिंग और नियंत्रण होनेसे यही होगा कि अन्नकी स्थिति कुछ सुधरेगी। शनि अक्तूबर में कर्कमें प्रविष्ट होता हैं; अतः तब तक विश्वके कुछ भागोंमें दुष्कालकी स्थिति रहेगी या भारतके पूर्वीय और दक्षिणी भागमें विशेषतः अकालकी स्थिति रहेगी। मिथुनमें शनिके संक्रमणसे पश्चिमी देशोंमें लड़ाई अधिक भयानक होगी। भयानक हत्याकाण्ड होंगे। राहुके मिथुन राशिमें जानेसे घी तैलोत्पन्न पदार्थों और धान्योंकी खपत बढ़ेगी।

शनि अक्तूबरमें कर्कमें प्रवेश करेगा; यह मध्यभारतके लिए अशुभ है। अकाल, प्लेग, रोग और अग्निकाण्डसे जनता दुःख उठावेगी। १९४५ के अन्तमें बृहस्पति तुलामें प्रविष्ट होता हैं, इससे रहस्यपूर्ण ज्वरसे मृत्यु होना सूचित होता है। राहु शनिका वस्तुतः मेल ७ जूनको होता है, अतः मार्च और सितम्बरके बीच यूरोपमें शत्रुको जीत लिया जायगा। अन्तिम विजय मित्रोंकी होगी पर उन्हें अभी लम्बा मार्ग उस तक पहुँचने के लिए पार करना पड़ेगा।

राजनीतिक गति-विधि और वार्तायें बहुत कुछ गुप्त रूपसे होंगी। मई और जूनमें ब्रिटेनको यह अवसर दिखानेको मिलेगा कि वह राष्ट्रिय चरित्रमें अनुपम है। इस ऐतिहासिक घड़ीमें मि० ईडन सम्भवतः नेता होंगे। राजा कुछ अस्वस्थ हों पर वे नीरोग हो जावेंगे। भारतीय राजनीतिक गति अवरोधको दूर करनेके लिए कुछ प्रयत्न किया जाना सम्भव है, पर सफलता मिलनेकी आशा नहीं है। अक्तूबरके बाद मि० चर्चिलका स्वास्थ्य तीसरी बार खराब होनेकी आशंका है। उड़नबमोंका हमला लन्दन पर शनिके सिंह राशिमें जाने तक होता रहेगा। भारतके विषयमें ब्रिटेनके अन्दर राजनीतिक विवाद होंगे, पर इस कारणसे युद्धसे ध्यान न हटेगा।

रूस विश्व-स्थितिमें अपने अंशका पूर्णतः स्वामी होगा। किन्तु स्टालिन जापान पर हमला करनेके लिए मित्रोंको प्रभावशाली मदद देगा। मि० चर्चिल अपने विचारोंको स्टालिनके अनुकूल बना लेंगे और यूरोपकी पुनर्व्यवस्थाके लिए मार्ग निकल आयगा। रूसकी बिना सम्मतिके यूरोपका भाग्यनिर्णय न होगा। रूस आक्रमणका नवीन और अप्रत्याशित तरीका निकालेगा जिससे विश्व चकित हो जावेगा। शनिकी अर्द्धस्थया स्थिति स्टालिनके लिए शुभ नहीं है।

जर्मनीका पश्चिमी मोर्चा शनि-राहुकी युति पर टूटना संभव है। विराम-सन्धिकी शर्तें अत्यन्त कठोर होंगी। जर्मनीके दमनके बाद भी गुरिल्ला युद्ध और अराजकता छा जानेकी सम्भावना है। चारों ओर महान् विनाश होगा। राहुके मिथुनमें जानेसे सम्भव है जर्मनी किसी और गुप्त अस्त्रको प्रकट करे और संसार चकित हो जावे। उच्च सरकारी अधिकारियोंकी बड़ी संख्यामें आत्महत्याएँ हों। गृह-मोर्चा टूट जायगा और हिटलरका अन्त दुखान्त होगा। अप्रैल या मईके अन्त तक जर्मनी दृढ़ प्रतिरोध करेगा। जर्मनीका भूगर्भीय आन्दोलन अन्तर्दुर्गोंका रहस्य खोलनेमें सहायक होगा। नाजी जर्मनीके पराजित हो जाने पर भी यूरोपमें राजनीतिक सन्तुलन और स्थिरता आनेसे पहले नवीन और पुरानी शक्तियोंके बीच संघर्ष होता रहेगा। पूंजी और श्रमीके बीच संघर्ष होगा।

तुर्की प्रमुख भाग लेगा। स्पेनमें फ्रांकोंकी शक्ति खतरेमें पड़ेगी। मिश्री राजनीति नाटकीय रूप धारण करेगी। अरब देश अशान्त रहेंगे।

भारतमें राजनीतिक हलचल बढ़ेगी। कांग्रेस नेताओंके छूटनेकी सम्भावना है। ब्रिटिश वचन और प्रतिज्ञायें अपूर्ण रहेंगी। हमारे अधिकांश नेता स्वार्थ भावनासे काम करेंगे और राष्ट्रिय स्वार्थोंको हानि पहुँचेगी। मुस्लिमलीगमें फूट पड़ेगी और बृहस्पतिके कन्यामें आनेसे प्रान्तिक स्वायत्तशासन काम करने लगे। वर्ष भर आर्थिक दृष्टिसे भारत पीड़ित रहेगा। वर्षा समय पर न होगी। सीडेड जिलों, सी० पी०, बंगाल और बिहारमें अकालकी स्थिति बनी रहेगी। कण्ट्रोल कुछ शिथिल होंगे। व्यापार सुधरेगा। सी० पी० और मध्यभारतमें एक नया ज्वर फैलेगा और इस रोगका निदान डाक्टर भी न कर सकेंगे। वर्षके मध्यमें भारतके एक महान् नेताकी मृत्यु सम्भव है। अगले दो वर्षोंमें भारतको विकट समस्याओंका सामना करना पडेगा। भारतकी स्वाधीनता जबतक स्वीकार न की जायगी और उसको न दी जायगी तबतक शांति और समझौतेके निर्णयोंमें विशेष सफलता न मिलेगी। अन्यथा १९६७ या इसके लगभग भारत विश्व-युद्धका रंगमंच बनेगा।

एक प्राचीन राज्य शोकमग्न होगा। ब्रिटेनके सामने भारतकी अनेक समस्यायें आवेंगी और वे शान्ति-सम्मेलनमें बड़ी बाधक होंगी।

बर्मा-मोर्चे पर आशासे जल्दी सफलता मिलेगी।

हवाई आक्रमण बढ़ेंगे और अधिक साहसपूर्ण होंगे। १९४५ में संयुक्त राष्ट्रोंका बहुत कुछ प्रोग्राम पूरा हो जावेगा।

जापानके विरुद्ध युद्ध बिना रुके चालू रहेगा। १९४५ के मध्यमें बर्मा मोर्चे पर जोरदार कार्यवाही दिखाई दे और पर्याप्त सफलता मिले। जापानकी ओरसे सन्धि-प्रस्ताव आना सम्भव है। जापानको आर्थिक सङ्कटका सामना करना पड़ेगा। जून तक जापान फिलिपाइन खो देगा। चीन सामरिक सफलता प्राप्त करेगा, पर चीनी जनता सुखी न होगी। कम्युनिस्टों और क्युमिण्टांगके बीच समझौता करानेका प्रयत्न किया जायगा पर वह विफल होगा। चीनको यदि सहायता मिलती रही तो वह तत्काल साहसिक युद्ध करेगा।

प्रेजीडेण्ट रूजवेल्टको स्वास्थ्यकी ओरसे सतर्क रहना चाहिये। संयुक्तराष्ट्र अमरीकामें श्रम मोर्चे पर अशान्ति रहेगी और श्रमी अधिक वेतनकी माँग करेंगे। शासनकी आलोचना बढ़ेगी, पर विजयोंके कारण जनता सरकारका साथ देगी। प्रशान्तमें संयुक्तराष्ट्र अपनी नौ-हवाई और स्थल शक्तिका प्रदर्शन करेगा।

सॅनफ्रांसिस्को परिषदका भविष्य

[लेखक— श्री प्रो० बी० वी० रमन, सम्पादक 'एस्ट्रालाजिकल-मेग्ज़ीन']

विश्व-शान्ति एक भ्रामक और काल्पनिक शब्द है। कुछ दशक भी संसारने कभी शान्ति नहीं देखी। क्योंकि नव ग्रहोंमेंसे केवल दो मंगलकारी हैं और शेष अनिष्टकारी हैं। ग्रहों और नक्षत्रोंका प्रभाव जीवन पर पड़ता है, यदि यह माना जाय तो विश्व-शान्ति स्वप्नकी चीज है और युद्धोंका अन्त करनेकी बात राजनीतिज्ञोंका केवल माया-जाल है। इंग्लैण्ड मंगलके प्रभावमें है और फ्रांस सिंहके प्रभावमें है। मंगल रक्तपाती ग्रह है और सूर्य चक्रवर्त्ती ग्रह है। फलतः इंग्लैण्ड और फ्रांस कभी नहीं मिल सकते। १९६८ के बादसे अगले छः वर्षों तक ग्रहोंकी स्थिति भयावह है। इसलिए सनफ्रांसिस्को

परिषदका भविष्य उज्वल नहीं है।

परिषद २५ अप्रैल १६४५ को होगी। अधिवेशनका समय नहीं दिया गया है। यदि दुपहर १२ बजे हों तो उस समय कर्क लग्न होगा।

विश्वशान्तिका भार मुख्यतः तीन देशों—रूस, इंग्लैण्ड और संयुक्त राष्ट्र अमरीका पर रहेगा। स्टालिनका चन्द्र मीन राशिमें पड़ा हुआ है, शनि और मंगलकी युति उस समय है जब कि मंगल लग्नसे सातवें मेषमें है। चर्चिलका चन्द्र सिंहमें है, यह गतिशील और राजकीय चिन्ह है। रूजवेल्ट का चन्द्र मिथुनमें मंगलके साथ हैं और शनिकी क्रूर दृष्टि है। ये चिन्ह मंगल सूचक नहीं है। स्टालिनको मंगल दशा और शनि भुक्ति है। चर्चिल का बृहस्पति अक्तूबर १६४७ तक उच्च स्थितिमें है शुक्र भुक्ति है। फलतः ब्रिटिश और सोवियत प्रधान मन्त्री सहमतिसे काम करेंगे और यह करार १६४७ के अन्त तक रहेगा। रूजवेल्टकी कुण्डली अधिक अनुकूल है पर उन पर साढ़ेसती सवार है। स्टालिनकी मंगल दशा लगभग १६४६ तक चलेगी। इसलिए उस समय तक यूरोप या एशिया विषयक जो निर्णय होंगे उनमें स्टालिनका प्रभाव प्रमुखतासे लक्षित होगा। शनिके कर्क राशिमें जाने तक भारतका प्रश्न आजके समान रहेगा, क्योंकि चर्चिलकी ग्रह स्थिति अच्छी है।

चर्चिलको बृहस्पति दशा और शुक्र भुक्ति है, यह उनकी इस उक्तिका स्मरण कराता है कि "वे राजाके प्रधानमन्त्री साम्राज्य पर उदक छोड़नेके लिए नहीं हुए हैं।" इसलिए भारत ब्रिटेनका घरेलू मामला है, यह सनफ्रांसिस्को परिषदमें माना जायगा। यदि परिषदके समय चन्द्र लग्नमें हो तो लग्नका स्वामी बुध है, यह मंगल और शुक्रके साथ हैं। पिछला वर्गोत्तम है। पर मंगल और शनिका संयुक्त प्रभाव इन पर पड़ रहा है। अतः सदस्योंमें अत्यधिक खिच रहेगी। समय श्रम और शक्तिका अत्यधिक व्यय करके निर्णयोंके बारेमें सफलता और प्रशंसाके पुल बांधे जावेंगे। संयुक्त राष्ट्रकी मिथुन राशि शनि और राहुके साथ हैं और मंगल और केतुकी उस पर दृष्टि है। स्वामी बुध अवश्य १० वें लग्नमें है। अतः यह समय उपस्थित राष्ट्रोंमें समझौता होनेके अधिक अनुकूल नहीं है। फलतः परिषद पूर्वके महत्त्वके प्रश्नोंको स्पर्श न करेगी। यदि १२ बजे परिषद हुई तो कुछ सफलता मिलेगी और अराजकताको रोका जा सकेगा। सूर्य शक्ति-शाली है, और चन्द्रसे मंगल ७ वें घरमें है, अतः औपनिवेशिक समस्या को परिषदमें न छेड़ा जायगा। १६२० में राजनीतिज्ञोंने जितनी दूरदृष्टिसे समस्याओं पर विचार किया था, उससे अधिकका वर्तमान राजनीतिज्ञ परिचय न देंगे।

शनि राहुकी युति बताती हैं कि परिषदमें विश्वका शासन करनेके लिए जो संस्था बना दी जायगी वह भारी भरकम होगी पर कार्यक्षम न होगी। मित्र राष्ट्रोंके बीच दीख रहे स्वार्थोंके संघर्ष पर खुल कर चर्चा न होगी, बल्कि उसको टाल दिया जायगा। मेषमें सूर्यकी उच्च स्थिति होनेसे ब्रिटेन औचित्यकी भावनाको प्रदर्शित न करेगा, जिसको कि वह विजितोंके प्रति करता रहा है। अगले तीन दशकोंमें ग्रहोंकी स्थिति एशियाई देशोंके अनुकूल हैं, और यदि परिषद एशियाई देशोंके सन्तोष-जनक प्रोग्राम बनाये तो शान्ति अपेक्षाकृत अधिक स्थायी हो सकती है। पर इसमें सन्देह है, क्योंकि चन्द्र और बृहस्पति उनकी मानसिक अवस्था और बुद्धिको सूचित करते हैं और यह वर्साई-सन्धिके समयसे भिन्न नहीं है। क्या राष्ट्रोंके राजनीतिज्ञोंके लिए यह अधिक उचित न होगा कि वे अन्तर्राष्ट्रिय परिषदोंका समय हम ज्योतिषियोंकी सलाहसे निश्चित किया करें ?

———

व्यापारिक तेजी-मन्दी और ज्यौतिष

[लेखक— श्री० प्रो० बी० सी० मेहता, म्युनिस्पल कमिश्नर]

गताङ्कमें अस्वस्थताके कारण मैं अपने श्रेणि-बद्ध लेखको उपस्थित नहीं कर सका, इसके लिये मुझे हार्दिक खेद है और प्रिय पाठकोंसे क्षमा चाहता हूँ।

यह लेख पाठकोंके पास प्रायः २० अप्रैल सन् १९४५ के लगभग पहुँचेगा। उस दिन अर्थात् ता० २० अप्रैलको प्लूटो ग्रह अपनी मार्गी गति पर आता है, यह अच्छी घटाबढ़ीका द्योतक है। घटाबढ़ी दुतरफी होगी, इसका प्रभाव खास कर चांदी सोनेमें दृष्टि-गोचर होगा। पहले मन्दी और फिर तेजी होनेकी सम्भावना है। तारीख २४ अप्रैलको मंगल ग्रह मीन राशिमें प्रवेश होता है, जबकि शुक्र पहलेसे ही मीन राशिमें स्थित है, यह योग थोड़े दिनोंके लिये रुईके बाजारमें तेजी लावेगा, ता० २४ को ही बृहस्पति बुधका पेरेलल है लिहाजा हाजिर रुईको चढ़ावेगा।

मईके पहले सप्ताहमें हर एक चीजका व्यापार तेजीका करना चाहिये। ता० २ मईको चांदी, सोने और शेयर बाजारमें तेजीका दोर–दौरा रहेगा, रुईमें भी तेजी आवेगी। तारीख ८ को मंगल नेपचूनका प्रतियोग थोड़ी मन्दीका रिएक्शन बताता है, यह मन्दी ता० १२ तक रहकर ता० १३-१४-१५ को रुई चांदी और सोना तेज होगा। ता० १५ को बृहस्पति मार्गी शामको होता है अतः आपको शाम पहले-पहले अपने तेजीके व्यापारको बराबर कर देना चाहिये, क्योंकि ता० १५ शामसे या ता० १६ से मन्दीकी जनरल लाईन शुरू होती है, इसका विशेष असर जून मासमें होगा, लेकिन ट्रेण्ड मन्दीका यहींसे शुरू हो जावेगा। इसका असर रुई चांदी और सोने पर पर्याप्त होगा, जनरल ट्रेंड मन्दीका होनेसे आपको उछालेमें बेचो और मन्दी आने पर खरीदों का सिद्धान्त बना लेना चाहिये। तेजीके उछाले ता० १८।२३ और २९ मईको आ सकते हैं।

ता० २ जूनको मेषमें मंगल प्रवेश होगा, यह रुई और चांदी सोनेकी मन्दीका विशेष द्योतक है। चांदी और सोनेमें अच्छी मन्दी आवेगी, रुई भी गिरेगी, अतः इन चीजोंकी मन्दीमें लाभ होना चाहिये। कपड़ा सूत भी सस्ता होगा। मेषका मंगल चूंकि कर्कमें स्थित प्लूटो ग्रहसे केन्द्र-योग शुरू करेगा, लिहाजा प्रत्येक सट्टेके व्यापारमें मन्दीका दोर-दौरा नजर आवेगा। हाँ, यह बात मुमकिन है कि बीच-बीचमें तेजीके रिएक्शन आते रहे, लेकिन तेजीके रीएक्शनमें बेचना श्रेयस्कर प्रतीत होता है।

ता० ११ जूनको निरयन मंगल वृषमें प्रवेश करता है, लिहाजा यहांसे मन्दी कुछ रुकेगी। ता० १६ जूनको कर्क राशिमें बुध (सायन) प्रवेश करता है यह चांदीकी मन्दीमें रोक लगावेगा, और कुछ तेजीका चमकारा ता० १६ से २२ तक चांदीके बाजारमें लावेगा। लेकिन चूंकि अन्य ग्रह जनरल मन्दीमें है इसलिये यह तेजी विशेष ठहरेगी नहीं और ता० २३ जूनसे २७ जून तक फिर चांदी सोने और रुईके व्यापारमें अच्छी मन्दी दृष्टि गोचर होगी। ता० २८ जूनको फिर एक योग तेजीका बन रहा है सो ता० ३० जून तक चांदी सोनेमें फिर तेजीका रीएक्शन आनेकी सम्भावना हैं।

जुलाईका प्रथम सप्ताह मन्दीका द्योतक है। केवल ता० ५ को एक तेजीका योग नजर आता है। फिर बाजार ता० १० जुलाई तक सामान्य सा रहेगा, या मन्दा रहेगा। ता० ११ जुलाईसे फिर तेजी कारक योग बनते हैं जो रुईके वो चांदी सोनेके बाजारमें तेजी लावेंगे। लिहाजा ता० ११ को या इससे पहले तेजीका व्यापार शुरू कर देना चाहिए।

ता० १३ को वृषका मंगल प्रवेश होता है, जो भी उपरोक्त तेजीका समर्थन करता है सो ज्ञात रहें। कच्ची रुई अर्थात् कराची वो पंजाबकी रुई भी अबसे तेजीकी तरफ बढ़ेगी।

ता० १८ जुलाईको बृहस्पति भी कन्यामें प्रवेश करता है, जो प्लूटो ग्रहसे सक्सटाईल शुरू करेगा, यद्यपि इसका पूर्ण Sextile काफी टाईम बाद होगा फिर भी यह एक दफे रुई, चांदी और सोनेको भभका देगा। लिहाजा हर व्यौपारीको तेजीका व्यौपार करना चाहिये। स्थानाभावसे हम यहां पर विशेष विस्तीर्ण फल लिखनेमें असमर्थ हैं। यह बात निश्चित है कि आगामी कुछ महीनोंमें व्यापारी जगत्में असाधारण व भयङ्कर घटाबढ़ी चलेगी, सैकड़ों व्यापारी मालामाल हो जावेंगे और अनेकों कंगाल। लिहाजा हमारा सादर अनुरोध है कि प्रत्येक व्यापारी बहुत सावधानीसे अपना व्यापार करें तथा बाजारका सामना कभी न करें। अर्थात् यदि आपने मन्दीका व्यापार किया है और तेजी चलने लगी है तो फौरन अपने मन्दीके व्यापारको नुकसानकी परवाह न करते हुए काट कर अलग हो जायें, नहीं तो बहुत पश्चात्ताप उठाना पड़ेगा, क्योंकि इस साल योगायोग ऐसे ही बने हैं।

मई जूनका व्यापार भविष्य

मई

मईमें भयंकर गर्मी, रोगोपद्रव, रक्तपात, आकस्मिक दुर्घटनाएं और युद्धका नया रूप जनतामें भय और असन्तोष वृद्धिके कारण बनाये रहेगा। १ को बुध शुक्र युति और ७ को शुक्र मार्गी होनेके कारण चांदी और रूईमें घटबढ़ होते हुए बाजारोंका अप्रैल वाला टोन यहाँ बदले हुए रूपमें दिखलाई देगा। १० को कृतिकाका सूर्य हवामें गजबकी गर्मी लायेगा। २३ अप्रैल वाला योग इस मासमें चालु रहनेके कारण यहाँ राजाओंमें आन्तरिक कलहका जोर ज्यादा रहेगा। खराब खबरें सुननेमें आयेंगी। २१ को चन्द्र नेपच्यून युति तेज बाजारों पर मन्दीकी सर्चलाईट फेंकना शुरू कर देगी। शिक्षक वर्ग कष्टका अनुभव करेंगे और आकाश बादलोंसे घिरा हुआ नजर आयेगा।

साप्ताहिक तेजी-मन्दी मई

प्रथम सप्ताह (३० से ६)

मन्दीको मौका मिला खरीदना ठीक है, मगर टिकेगी नहीं, इसलिए थोड़े नफेसे बेच दें।

चांदी और रूईमें जोरदार घटबढ़ होनेका योग है; मगर चांदी घटबढ़ कर प्रायः समान रहेगी। रूई और सोनेमें मन्दीका असर रहेगा। सुगन्धित पदार्थ और काली मिर्च तेज। बिनौला, गेहूँ और ग्वार मन्दे होकर तेज। अनाजके भाव अबसे दो मासके भीतर काफी बढ़ेंगे।

ता० १ चांदी मन्दी, २ रूई और पाट मंदी।

दूसरा सप्ताह (७ से १३ मई)

तेजीके तीर मन्दीको मार भगायेंगे, फिर भी बाजार दो-तीन रङ्ग बदलता हुआ नजर आयेगा।

चांदीमें तेजीका काम करो; सोना घटबढ़ कर समान होनेकी सम्भावना है। रुई घट कर तेज। गेहूँ, ग्वार, चावल, सरसों, राई, सीसा और एल्युमिनियम तेज रहेगा। शेयरोंमें अच्छा हेर-फेर होगा।

ता० ७ रूई सोना तेज। ६ चांदी मंदी।

तीसरा सप्ताह (१४ से २० मई)

एक तरहसे मंदीका बोलबाला रहेगा, मगर सप्ताह समाप्त होनेसे पहले तेजी का चांस है।

बाजारोंमें नई बात होगी। हेरफेरका उधम मचेगा। चांदी और सोनेके लिए तेजीसे ज्यादा मन्दीका काम करें। रूई, बिनौलामें घटबढ़ कुछ तेजी। धान्य, तिल, तेल, किराना, सुपारी, नारियल, पाट, घी, ग्वार तेजीकी तरफ।

मंदी या नजराना लगाओ।

चौथा सप्ताह (२१ से २७ मई)

तेजीकी ताकत बढ़ने लगेगी। मन्दीकी खरीदमें नफा नजर आने लगेगा।

सोना घटबढ़ कर समान रह सकता है। चांदी और रुईकी रफ्तार तेजीकी तरफ दौड़ लगायेगी। तीसी, ताम्बा, कालीमिर्च और कपड़ा तेज। खांड और पाट मन्दा। बिनौला तेज होकर मन्दा।

ता० २२ चांदी तेज।

जून

जूनका आरम्भ शान्तिदायक न हो तब भी शान्तिपूर्ण वातावरणका योग क्षणिक या अस्थायी इस महीनेके अन्त पर्यन्त आयेगा। वैसे सामुद्रिक देशोंमें युद्ध, मित्रराष्ट्रोंकी विजय, भारतमें दुर्भिक्ष, व्यापारिक क्रान्ति, रोगोपद्रव और विशेषतः भूकम्प या प्रबल वायु प्रकोपका योग है। बरसने वाले बादलोंका प्रायः अभाव रहेगा।

शुरूमें मेषका भौम चांदी और अन्नके भावोंमें तेजी आरम्भ करेगा। मगर "चार दिनकी चांदनी" से ज्यादा महत्त्व नहीं रखता, फिर भी चं० हृ० यु० एक बार अच्छी तेजी लायेगा, किन्तु १८ तक बाजार वापस गिरता हुआ दिखलाई देगा। खरीद कर बेचने वाले खासा लाभ उठा सकेंगे। लगभग दूसरे बाजारों पर भी यह प्रभाव पड़े बिना नहीं रहेगा। यहां हम व्यापारियोंको सावधान करते हुए चेतावनी देते हैं, समय और बाजारका टोन देख, सोच समझ कर व्यापार करने वाले कमायेंगे नहीं लेनेके बदले देना पड़ जायगा इसे याद रखें।

साप्ताहिक तेजी-मन्दी जून

प्रथम सप्ताह (२८ से ३ जून)

शुरूआतमें तेजी और फिर मंदी आनेका मतलब बेच कर खरीदना समझिये।

चांदीकी मन्दी तेजीकी तरफ जोरसे बढ़ेगी, सोना ताम्बा तेजीके तरफदार बने रहेंगे। साधारण मन्दीसे लोहा, कपड़ा, चना, मोठ, मूङ्ग, गुड़ और ग्वार तेज। पीपल और पाटमें मंदीका असर रहेगा।

ता० २८ सोना और लोहा तेज।

दूसरा सप्ताह (४ से १० जून)

मंदीमें खरीदना और तेजीमें बेचना समझदारका सच्चा सौदा है।

सोनेकी तेजी ताकतवर समझिये और सोनेकी घटाबढ़ीसे पाकेट गरम करिये। सूत, कपड़ा, बाजरा, ग्वार, अलसीमें तेजी। रूईमें घटबढ़ ज्यादा हो कर तेजीसे अधिक मंदीका टोन रहेगा।

ता० ६ शेयर बाजार गरम।

तीसरा सप्ताह (११ से १७ जून)

यहाँ पहले बेचना और पीछे खरीदना ठीक है।

सोना मंदा। चांदी, रूई, लोहा और ग्वार कुछ तेज हो कर मन्दा होगा। यही हाल और चीजोंका समझें।

ता० १२ चांदी तेज

चौथा सप्ताह (२३ से २६ जून)

मन्दीसे सप्ताह शुरू होगा। तत्काल खरीद कर बेच दीजिये।

इस सप्ताहके अन्त पर्यन्त भावोंके ज्यादा गिरनेका योग है; अगर सम्भव नहीं हुआ तो लोहा, कपड़ा और बिनौलामें खासी तेजी रहेगी। व्यापार और व्यापारियोंकी स्थिति डांवाडोल रहेगी। पहलेसे सचेत होने वाले घाटेसे बच जायेंगे।

पांचवाँ सप्ताह (२५ से १ जुलाई)

इस हफ्तेमें तेजीका काम करने वाले जीतमें रहेंगे। इसमें संशयकी जरूरत नहीं है।

सोना कुछ तेज, चांदी तेज, शेयर और रूईमें घटबढ़। जौ, चना, हीरा, माणिक, बिनौला, सरसों, तिल, तेल, एरण्डा, सिंगदाना, मूङ्गफली, ग्वार तेज, सफेद कपड़ा मन्दा।

ता० ३० चांदी सेना मन्दा।

["वार्षिक भविष्यप्रकाश" रतनगढ़से प्राप्त]

त्रैमासिक भविष्य प्रकाश

[लेखक—श्री० पं० गङ्गाप्रसाद जी ज्योतिषाचार्य]

चैत्र सुदी—

तिथि	वार	व्यापारिक फलप्रदर्शक योगोंका फल
११	सो०	चांदी, सोना, रुई खरीदनेका चांस है।
१२	मं०	आज मुनाफा मिले तो छोड़ो नहीं।
१३	बु०	पूर्णिमाका योग मन्दीकी सूचना देता है।
१४	गु०	चांदी और सोना मन्दीमें खरीदो।
१५	शु०	मीनका मङ्गल मन्दी लाकर तेजी करता है।

वैशाख वदी—

१	श०	बाजार खुलते बेचो २॥ दिनमें लाभ।
२	र०	अलसी, सरसों, अरहर खरीदनेके चांस
३	सो०	सोनेकी मन्दी, चांदीकी तेजी रुईको साथ लेगी।
४	मं०	मुनाफा मिल रहा हैं तो स्टाक कम करो
५	बु०	मार्गी बुध मन्दीकी सूचना देता है।
६	बृ०	बाजार मन्दा देखो तो चांदी सोना खरीदो।
७	शु०	कलकी खरीद आज नफा दे तो छोड़ो नहीं।
८	श०	प्रायवेटमें मन्दी, फिर तेजी रहेगी।
९	र०	घटबढ़ साधारण।
१०	सो०	चांदी सोना रुई शेयर खरीदनेके चांस हैं
११	मं०	कृत्तिका पर रवि. तेजीकी सूचना देता है
१२	बु०	चतुर्दशीका क्षय मन्दी लाकर तेजी करेगा।
१३	गु०	मन्दीका रङ्ग देखो तो चांदी खरीदो।
३०	शु०	चांदी, रुई, गुवार पर तेजीका भड़का।

वैशाख सुदी—

१	श०	चांदी, सोनेको मुनाफा लेकर बेचो।
२	र०	अलसी बारदानेके गिरनेकी सूचना हैं।
३	सो०	चांदी, रूई, तेजी पर्याप्त दिखा रही हैं।
४	मं०	डबल बेचाए करो स्टाक नुकसान देगा।
५	बु०	गल्ले, कपड़ेके ग्रह भारी तेजीमें बैठे हैं
६	गु०	मन्दीका रङ्ग आवे तो चांदी पोते करो।
७	शु०	चावल, तारामीरा पर मुनाफा विचारें।
८	श०	कालीमिर्च वारदाना जूटकी मन्दी।
९	र०	बम्बई कलकत्ताके शेयरोंमें भारी उथल-पुथल।
१०	सो०	चांदी, सोना, रुईके खरीदनेके चान्स हैं
११	मं०	तेजी टिकाऊ नहीं हैं नफा लो।
१२	बु०	बाजार खुलते बेचो शामको नफा लो।
१३	गु०	चांदी, रुई पहिले खरीदो पीछे बेचो।
१४	शु०	चांदी, रुई, सोनाका बेचाण ही चांस है
१५	श०	मन्दीका टोन आवे तो नफा मत छोड़ो।
१५	र०	बाजार थम जावें तो एक दिन बाजार और देखो।

ज्येष्ठ वदी—

१	चं०	गुवार, चांदी, सोना नफा देवे तो छोड़ना नहीं।
२	मं०	रुई, सोनेकी ऊंचाई पर विचार करो।
३	बु०	चांदी, वारदाना, हैसीयनकी खरीद करो
४	गु०	इकतरफा तेजी देखो तो डबल खरीदो।
५	शु०	तेजीके टोनमें नफा लेकर बेचो।
६	श०	मन्दीकी स्पेशल राय टिकाऊ नहीं है।
८	र०	बाजार नैयाकी तरह ऊंचा नीचा रहेगा
९	सो०	सप्तमीका क्षय—तेजीकारक है।
१०	मं०	चांदी, रुई, सोना खरीदो।
११	बु०	तिल्ली, सरसोंके भाव ऊंचे जायेंगे।
१२	गु०	बारदाना, अलसी, गुवारके भाव घटेंगे।
१३	शु०	चांदी चमके तो बेचो।
१४	श०	मन्दीके टोनमें नफा लेकर खरीदो।
३०	र०	रोहिणीका क्षय चांदी सोने पर मन्दी लाता है।

ज्येष्ठ सुदी—

१ चं० बाजार खुलते चांदी सोना रुई खरीदो।
२ मं० तेजीका झटका आवे तो तात्कालिक लाभ लो।
३ बु० यदि स्टाक न होवे तो फिरसे पोते करो
४ गु० चन्द्रदर्शन मिथुन संक्रान्ति भारी तेजी दिखला रही है।
५ शु० परसोंकी खरीदो आज नफा दे तो छोड़ो नहीं।
६ श० पहिले बेचो पीछे खरीदो लाभ होगा।
७ र० बारदाना और शेयरोंके भाव नीचेसे ऊंचे होंगे।
८ सो० एक तरफा देखो तो हर चीज खरीदो।
९ मं० चांदी, सोनेकी मंदी खरीदना बताती है।
१० बु० गुवार, सरसोंके चांस मन्दीमें रहेंगे।
११ गु० चांदी ऊंची सोना नीचा दिखाई दे।
१२ शु० रुई और चांदीकी तेजी टिकाऊ नहीं हैं
१३ श० पहिले बेचने पीछे खरीदनेका चांस है।
१४ र० चन्द्रग्रहण पहिले मन्दी लाकर तेजी करेगा।
१५ सो० बाजार खुलते बेचो, प्रायवेटमें मन्दी।

आषाढ़ वदी—

१ मं० बाजार खुलते चांदी खरीदो ४ दिनमें लाभ।
२ बु० पहिले बेचो, पीछे खरीदो बम्बई टोन।
३ गु० चांदी, रुईके खरीदनेके चांस हैं।
४ शु० सोना तेजीमें डबल बेचो लाभ हो जायगा।
५ श० चांदी, और रुईके भाव डावाँडोल रहेंगे
६ र० रुईमें ५), सोनेमें ३), चांदीमें ४) ऊंचे नीचेमें खरीदो बेचो।
७ सो० चांदी रुई पहिले खरीदो पीछे बेचो।
८ मं० सोनेकी तेजी पर्याप्त दीख रही है।
९ बु० दशमीका क्षय तेजी लाकर मन्दा दिखावेगा।
११ गु० बाजार खुलते खरीदो ४ बजे नफा लेकर बेचो।
१२ शु० चांदी, सोना, रुईके बेचाण ही चांस हैं
१३ श० मन्दीसे तेजी देखो तो और बेचो।
१४ र० प्रायवेट, बारदाना शेयर मन्दीमें उतरेंगे।
३० सो० सोमवती मन्दीका रङ्ग दिखावेगी।

आषाढ़ सुदी—

१ मं० तेजीके टोनमें नफा लेकर बेचो।
२ बु० मन्दी देखो तो चांदी पोते करो।
३ गु० रुई और सोनेकी तेजी पर्याप्त है।
४ शु० चांदीका रङ्ग तेजीसे मन्दीका रहेगा।
५ श० पहिले बेचो पीछे खरीदो लाभ होगा।
६ र० बारदाना जूट एक दम मन्दीमें गिरेंगे।
७ सो० चांदीकी तेजी बराबर रहेगी।
८ मं० पहिले खरीदो पीछे बेचो लाभ होगा।
९ बु० मन्दीके टोनमें खरीदना मत भूलो।
१० गु० बाजार साधारण घटबढ़में चलेंगे।

आवश्यक सूचना

पृष्ठ ३० पर हमारे 'श्रीविश्वमार्तण्ड पञ्चाङ्ग'का विज्ञापन छपा है। किन्तु अभी हमें प्रकाशकसे सूचना मिली है कि पंचाङ्ग और उर्दू जंत्री बिल्कुल समाप्त है। विक्रयार्थ एक भी प्रति शेष नहीं रही है। अतः अब कोई सज्जन इस वर्षके पंचाङ्ग और जंत्रीके लिए आर्डर न भेजें। केवल गुरुमुखीकी कुछ प्रतियां शेष हैं।

—सम्पादक

ऐतिहासिक नाटक—

मिहिरकुल

[लेखक—डा० श्री कैलाशनाथ जी भटनागर एम० ए०, पी-एच० डी०]

[गतांकसे आगे]

छठा दृश्य

'स्थान—शाकलका निकट वर्ती वन'

समय—दुपहर

(मिहिरकुल तथा कुछ राजकर्मचारी वनमें कुछ बात-चीत कर रहे हैं।)

एक कर्मचारी—कल उन उपद्रवी बौद्ध संन्यासियोंने बड़ी चतुराई दिखाई, किस कौशलसे वे निकल भागे ?

दूसरा कर्मचारी—यदि संसार-विरक्त पुरुष ऐसे चतुर हो सकते हैं तो दूसरोंका क्या कहना ?

तीसरा कर्मचारी—अजी, वे भी तो संसारमें ही बड़े होकर सन्यासीके रूपमें हमारे समक्ष आते हैं। क्या आप समझते हैं कि, वे जंगलों वा कन्दराओंमें सन्यासीके रूपमें ही उत्पन्न होते हैं।

मिहिरकुल—जंगलों वा कन्दराओंमें उत्पन्न होने वाले तो और रंग-ढंगके होते हैं, उन्हें कहते हैं....

(सब हंस पड़ते हैं)

दूसरा कर्मचारी—उन्हें कहते हैं वानर, वानर भी वनोंमें रहते हैं और ये सन्यासी भी समानता रखनेके लिए सन्यासी भगवे कपड़े पहन लेते हैं ?

पहला कर्मचारी—ठीक कहा ? बिलकुल ठीक कहा ?? वानर वानरी जैसे अपने बच्चोंको पीठ पर लादे जाते दिखाई देते हैं, वैसे ही सन्यासी अपनी पीठ पर अपनी गठड़ियां लादे जाते दिखाई देते हैं।

मिहिरकुल—भला भगवे कपड़ेका क्या तात्पर्य है ?

तीसरा कर्मचारी—कहा जाता है कि, भगवे कपड़े शान्तिके द्योतक हैं, जैसे गेरू शान्ति प्रद है वैसे ही उसका रंग समझा जाता है।

मिहिरकुल—अर्थात् ऐसे वस्त्रों वाला अपनी बाह्य और भीतरी शान्तिको दिखाता है।

तीसरा कर्मचारी—जी महाराज !

दूसरा कर्मचारी—अथवा महाराज ! यह समझिए कि, शांतिप्रद वस्त्रोंसे उनको धारण करने वाला अपनी भीतरी ऊष्णताको शांत करना चाहता है।

मिहिरकुल—और वास्तवमें काया शांत नहीं हो पाती, इसीलिए कई सन्यासी उद्दण्ड दिखाई देते हैं।

पहला कर्मचारी—अर्थात् लड़नेको दंड ऊपर उठाये रहते हैं।

मिहिरकुल—मिहिरकुल जानता है कि, इस उद्दंडताका दंड किस प्रकार दिया जाता है।

तीसरा कर्मचारी—अन्य प्रान्तोंमें तो इनकी ऐसी उद्दंडता सुननेमें नहीं आती।

मिहिरकुल—सुननेमें आये कैसे ? सजातीय होनेसे कोई अपने राजाकी निन्दा नहीं करता। विजातीयका तिल तुल्य दुःख भी पहाड़सा वर्णन किया जाता है।

दूसरा कर्मचारी—संसारचक्र ऐसा ही है। (रुक कर) अभी सेवक गण उस मृगको न लाए ? कैसा सुन्दर था वह मृग ? जब वह जीवित मृग राजोद्यानमें कूदता-फांदता दिखाई देगा, तब कैसा सुन्दर लगेगा। अच्छा दृश्य रहेगा। अब तक तो उन्हें यहाँ आजाना चाहिए था।

(एक सेवकका प्रवेश)

सेवक—(साभिवादन) महाराज ! हम लौट आये हैं, परन्तु................

मिहिरकुल—इतने विलम्बसे आए, और अभी परंतु की आवश्यकता है ?

सेवक—(नम्र भावसे) महाराज ! हम मृगका पीछा करते जा रहे थे कि मृगको किसीने पकड़ लिया। हमने पास पहुँच कर देखा कि, उसने मृगका बाण निकाल दिया था और वहां कुछ औषधि लगा दी थी। जब हमने मृग मांगा तब वह हम पर दयाका उपदेश बरसाने लगा।

मिहिरकुल—मृग उसने दिया या नहीं ?

सेवक—नहीं महाराज ! जब हमने कहा कि मृग महाराजका है, उन्होंने इसे निशाना बनाया हैं वह कहने लगा कि 'मृग उसका होगा जो उसका रक्षक है, क्योंकि महाराजने उसे जख्मी किया है, इसलिए यह उनका कभी नहीं हो सकता।

मिहिरकुल—(सरोष) तो तुम मृग छोड़ आए। वह अकेला तुम सबसे बलवान् था ? जाओ, मृग लेकर आओ, नहीं तो उसका सिर उपस्थित करो।

सेवक—महाराज ! वह संन्यासी था, हम उस पर वार नहीं कर सकते थे।

मिहिरकुल—(मुट्ठी पीसते हुए) कायर ··· संन्यासी····

सेवक—महाराज ! वह मृगको गोदीमें लिए स्वयं द्वार पर उपस्थित है। अब आपकी जो आज्ञा हो।

मिहिरकुल—(तमतमा कर) शीघ्र उसको हमारे सामने लाओ।

(सेवकका प्रस्थान और मृगको गोदीमें लिये हुए सन्यासीके साथ प्रवेश)

संन्यासी—जय हो महाराजकी !

मिहिरकुल—देखो संन्यासी, बौद्धमत क्या यह उपदेश देता है कि पराया धन अपना है ?

संन्यासी—देव ! ऐसी शिक्षा कोई मत नहीं देता, बौद्धमत भला क्यों कर ऐसा उपदेश देता ?

मिहिरकुल—तुमने मृग तब दिया क्यों नहीं ? तुम्हारा उस पर क्या अधिकार है ?

संन्यासी—महाराज ! उसके रक्षक होने के नाते उस पर मेरा अधिकार हो गया है। किसी वस्तुका नाशकर्ता उसका अधिकारी नहीं हो सकता।

मिहिरकुल—ओहो ! बहुत ज्ञानी हो तो शिविका-सा आचरण क्यों नहीं करते हो ?

संन्यासी—मुझे उसमें कुछ बाधा नहीं। मृग मेरी शरणमें आगया है, मैं उसे प्राण रहते छोड़ नहीं सकता। लीजिए, मेरा शिर उपस्थित है।

(संन्यासी दोनों हाथोंसे मृगको एक ओर पकड़े रहता है, और अपना शिर झुकाता है।)

दूसरा कर्मचारी—कहना सहज होता है, करना कठिन।

संन्यासी—(सिर ऊपर उठा कर) नहीं महाशय ! आप मेरे वचनकी परीक्षा कर देखिए।

मिहिरकुल—(क्रोधसे रक्ताक्ष किए) संन्यासी ! तुम इतने हठी जान पड़ते हो कि, राजाकी वस्तु लौटानेमें अपने प्राण लड़ा देना चाहते हो। अच्छा ठहर जाओ, अभी निपटारा हुआ जाता है। (सेवकसे) इस राजद्रोहीको दण्ड दो। अच्छा ठहरो, पहले तवा गरम करो, उस पर इसका सिर रखा जायगा।

(सब लोग इस दण्ड पर भयभीत हो जाते हैं। कर्मचारी एक दूसरेकी ओर देखते हैं। परन्तु बोलनेकी किसीमें सामर्थ्य नहीं। संन्यासी पूर्ववत् सिर झुकाये रहते हैं। मृग मिहिरकुलकी ओर कृपालुकी प्राणभिक्षाके लिए मानो देखता है।)

सेवक—महाराज ! मुझे क्या आज्ञा है, पहले तवा गरम करूँ अथवा················।

मिहिरकुल—तवा तो पाकशालामें गरम होगा। वही ले आओ। मैं विलम्ब नहीं चाहता, ऐसा राजद्रोही मेरे सामने एक क्षण जीवित नहीं रह सकता !

(सेवकका प्रस्थान और एक गरम तवा लिए पुनः प्रवेश)

संन्यासी—महाराज ! नीचे झुकाए रहनेसे मेरी गर्दन थक गई है, कितना विलम्ब है ?

मिहिरकुल—(दांत पीसते हुए) बस अब कुछ विलम्ब नहीं, राजद्रोहीका रक्त पीनेके लिए मेरी